॥ २७ ॥

॥ रामकथा ॥

मोरारिबापू

मानस-कामदर्शन

खजुराहो (मध्य प्रदेश)

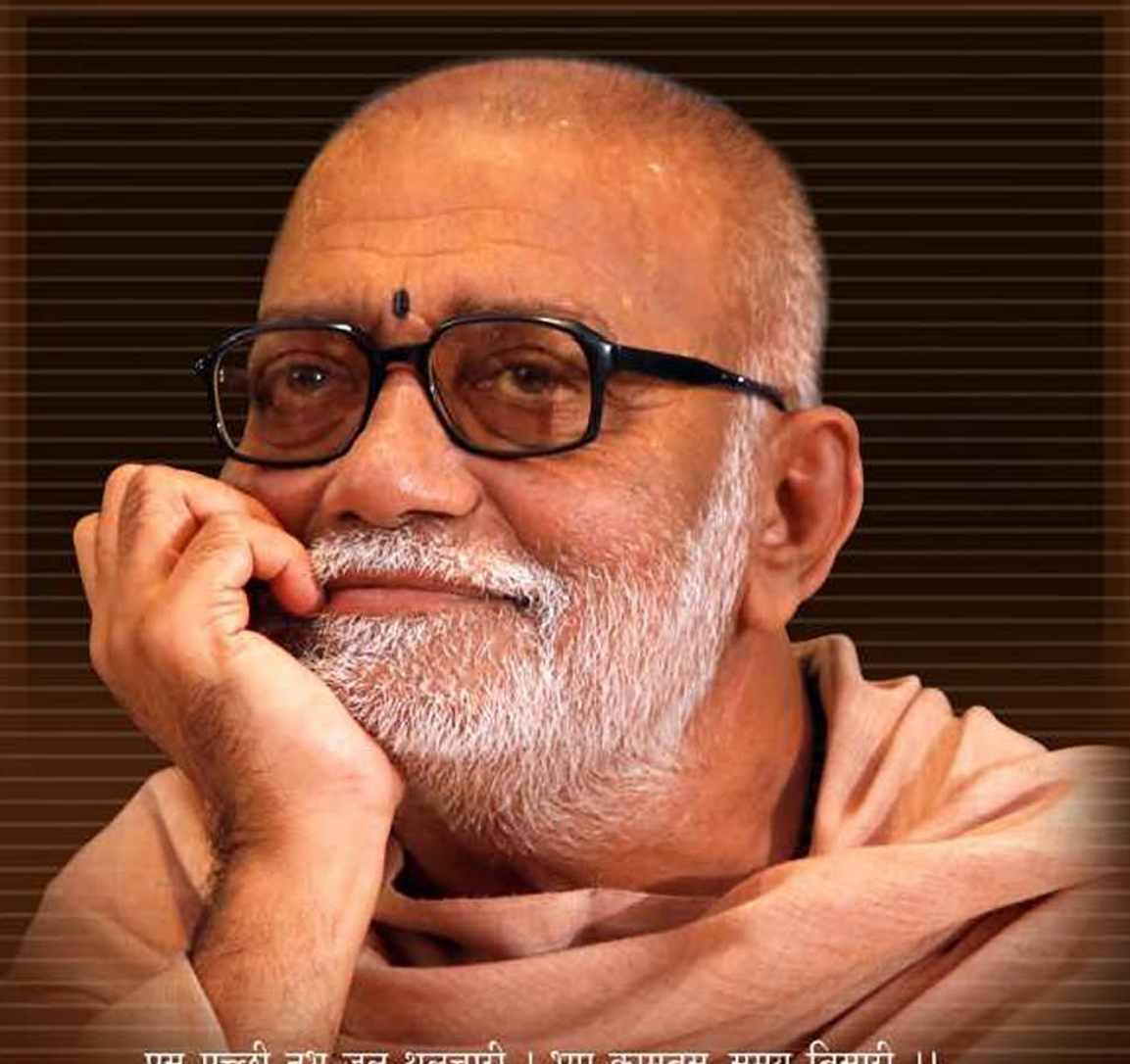

पसु पच्छी नभ जल थलचारी । भए कामबस समय बिसारी ।।
सिद्ध बिरक्त महामुनि जोगी । तेपि कामबस भए बियोगी ।।

यहां के शिल्प में बाहर कामदेव है, अंदर महादेव है।
और हमारी वास्तविकता ये है कि
हम आगे दिखने में महादेव है, अंदर कामदेव है!
– मोरारिबापू

।। रामकथा ।।

मानस–कामदर्शन

मोरारिबापू

खजुराहो (मध्य प्रदेश)

दिनांक : १३-९-२०१४ से २१-९-२०१४

कथा-क्रमांक : ७६४

प्रकाशन :
मई, २०१५

प्रकाशक

श्री चित्रकूटधाम ट्रस्ट,
तलगाजरडा (गुजरात)
www.chitrakutdhamtalgajarda.org

कोपीराईट

© श्री चित्रकूटधाम ट्रस्ट

संपादक

नीतिन वडगामा
nitin.vadgama@yahoo.com

राम–कथा पुस्तक प्राप्ति

सम्पर्क–सूत्र :
ramkatha9@yahoo.com

ग्राफिक्स

स्वर अेनिम्स

प्रेम–पियाला

मोरारिबापू की रामकथा 'मानस–कामदर्शन' खजुराहो (मध्य प्रदेश) में ता.१३–९–२०१४ से २१–९–२०१४ के दिनों में सम्पन्न हुई। कुछ साल पहले बापू ने सूर्यमंदिर–कोणार्क में 'रामचरित मानस' को आधार बनाकर 'मानस–कामसूत्र' का गान किया था। खजुराहो में इस विषय पर नये रूप में विचार–विमर्श हुआ और बापू ने कथा का नामकरण किया 'मानस–कामदर्शन।

'काम रस है, लेकिन राम महारस है।' और 'हमने काम का प्रभाव जाना है, स्वभाव नहीं जाना है।' जैसे सूत्रों का 'मानस' के परिपेक्ष्य में विशद विश्लेषण करते हुए बापू ने कहा कि ''काम तो बहुत भोगा जा रहा है लेकिन वासना की दृष्टि से भोगा जा रहा है; उपासना की दृष्टि से भोगा गया होता तो हर घर में राम पैदा होता। और क्या 'रामचरित मानस' काम को नकारता है? शालीनता से सूत्र को साफ़ करके बताओ; समाज की श्रद्धा टूटेगी नहीं, दृढ़ होगी।'' साथ ही संसार को चलाने के लिए काम को आवश्यक समझते हुए बापू ने उसकी सम्यक्ता का जिक्र भी किया।

बापू का निवेदन रहा कि केवल एक पुरुषविग्रह और एक स्त्रीविग्रह के रूप में ही काम का अर्थ सीमित नहीं है, बल्कि काम का क्षेत्र बहुत विशाल है। विध–विध क्षेत्र में भटकती हुई हमारी अमर्याद कामनाओं को भी बापू ने काम के ही परिवार में शामिल किया और ऐसे काम की अर्थछाया का समुचित विस्तार किया।

राम, शिव और नारद जैसे 'मानस' के पात्रों का काम के प्रति कैसा व्यवहार रहा और हमें क्या करना चाहिए उसका तात्त्विक दर्शन भी व्यासपीठ से व्यक्त हुआ, ''काम को राम नचाते हैं, शिव जलाते हैं, नारदजी जीतते हैं; इसमें हमारा आदर्श कौन हो सकता है? हम नचा पाएंगे तो राम आदर्श; जीत पाए तो नारद आदर्श; जला पाए तो शिव आदर्श। मेरा मानना है कि हम जलाए ना, जीते ना, नचाए ना; एक डिस्टन्स बनाकर हम रस लें। जिसका मन प्रौढ़ हो वो काम को जला सकता है; जिसका मन विमल हो वो काम को जीत सकता है; जिसका मन रामवृत्तिओं से भरपूर है वो काम को नचा सकता है।''

मोरारिबापू ने ऐसा सूत्रात्मक निवेदन भी किया कि 'न काम को बश करे, न काम के बश में हो जाए; गुरुकृपा से भजन करते–करते 'बस' करे, रुक जाए; जागृति से 'बस' करे।'

'रामचरित मानस' के विभिन्न पात्रों–प्रसंगों की पृष्ठभूमि में मोरारिबापू की इस 'मानस–कामदर्शन' कथा अन्तर्गत विशिष्ट एवं जीवनोपकारक कामदर्शन प्रस्तुत किया गया।

– नीतिन वडगामा

मानस–कामदर्शन–१

'रामचरित मानस'में कामदेव को परोपकारी कहा है

पसु पच्छी नभ जल थलचारी । भए कामबस समय बिसारी ।।
सिद्ध बिरक्त महामुनि जोगी । तेपि कामबस भए बियोगी ।।

बाप, परमात्मा की असीम और अहेतु कृपा से कुछ अंतराल के बाद रामकथा गाने का सुअवसर प्राप्त हुआ है। इस परम पावन मौके पर, इस पावन भूमि पर सब से पहले यहां की समस्त चेतनाओं को प्रणाम करते हुए बिलकुल सहज और अहेतु कृपा करने का आप का स्वभाव है, अनंतश्रीविभूषित परम पूज्य जगद्गुरु भगवान पधारे हैं; मैं व्यासपीठ से बार-बार, 'बंदउ तब बार ही बारा।' यद्यपि संकोच हो रहा है कि, 'प्रभु तरुतर और कपि डार पर।' कहां आप का हमारे लिए शताब्दीओं से और अनंत काल तक रहेगा ऐसा परम पावन और गौरवपूर्ण स्थान और वो राजापुर की कथा में भी ऐसे ही आकर बैठ गए और आज भी ऐसे ही आकर आशीर्वाद देने के लिए आप की उपस्थिति है; मैं पुन: एक बार प्रणाम करता हूं, आज्ञा प्राप्त करता हूं। बाप! इस कथा के आयोजन में जो परिवार निमित्तमात्र बना है, मैं ये फूल आशीर्वाद के रूप में यजमान परिवार को प्रदान करता हूं। कथा में उपस्थित सभी को व्यासपीठ से मेरा प्रणाम।

भगवन्, कुछ साल पहले भगवान की भूमि पर कुछ किलोमिटर दूर सूर्यमंदिर कोणार्क में रामकथा गाने का अवसर मिला। वहां के शिल्प की महिमा चारों ओर रही। मैं भी कभी गया था। दर्शन किया। वहां गुरुकृपा से प्रेरणा हुई थी कि 'रामचरित मानस' को आधार बनाकर 'मानस' में जहां पूज्यपाद गोस्वामीजी ने काम की चर्चा की है, उसकी चर्चा व्यासपीठ सावधानीपूर्वक करे। और आप सब जानते हैं, उस कथा का नाम रखा था 'मानस-कामसूत्र।' पंक्तियां उठाई थी यदि मैं न भूलता हो तो-

काम कला कछु मुनिहि न ब्यापी । निज भयँ डरेउ मनोभव पापी ।।
सीम कि चाँपि सकइ कोउ तासू । बड़ रखवार रमापति जासू ।।

इस दो परम पावन पंक्तिओं के आधार पर हम सब मिलकर 'मानस' अंतर्गत काम के बारे में जो कुछ कहा गया है, वो संवादी चर्चा कर चूके हैं। तब ही मन में एक मनोरथ रहा कि एक बार फिर इस विषय को केन्द्र में रखते हुए गाया जाए। रमाभैया का मनोरथ था कि खजुराहो में एक कथा इस पर हो; योग बन गया। शिवजी ने तीसरे नेत्र से कामदेव को भस्मीभूत कर दिया था लेकिन फिर शिव ने उसको मनोज बना दिया। और शिव ने ये भी कहा 'मानस' में कि-

जब जदुबंस कृष्न अवतारा ।
होइहि हरन महा महिभारा ।।

और फिर हम सब के मन में वो बैठा है। लेकिन उस समय तो जला दिया था। तो चलो, हम सब मिलकर इन श्राद्ध के दिनों में श्रद्धापूर्वक कामदेव का श्राद्ध करें। किसीने नहीं किया होगा बेचारे का श्राद्ध! और वो श्राद्ध भी जगद्गुरु भगवान आचार्य की पावन उपस्थिति में!

उस समय कहा था कि नहीं खबर नहीं, लेकिन ये 'मानस कामसूत्र' भाग-१ और फिर भाग-२ करेंगे ऐसी बात हुई, न हुई मुझे खबर नहीं; लेकिन दूसरी कथा करेंगे ऐसी बात थी। लेकिन मैं परिवर्तन इतना करता हूं कि खजुराहो की कथा में 'मानस-कामसूत्र' नहीं है; वो हो गया। ये फिर एक नये रूप में स्वतंत्र हो रहा है और मेरी व्यासपीठ नाम देना चाहती है, 'मानस-कामदर्शन।' सूत्र पढ़े या सुने जाते हैं, दर्शन तो नयनों से देखना पड़ता है।

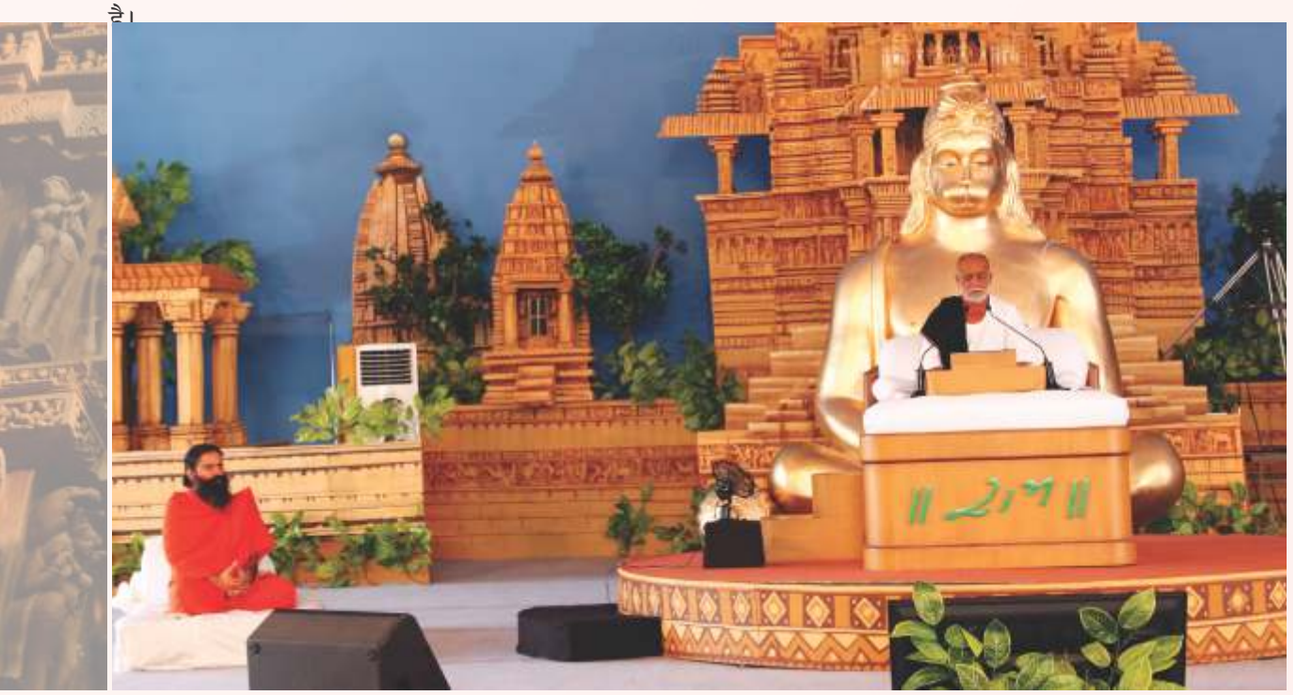

मैं पहले भी खजुराहो आया हूं कुतूहलवश। फिर एक बार राजापुर से भी यहां आना हुआ। तब भी भगवान के दर्शन किए, आज भी एरपोर्ट से सीधा गया। और मैं कह भी रहा था, गुरुकृपा से मेरे मन पर तो इन शिल्पों की कोई विकृत असर नहीं हुई है। ये शिल्प मेरी समझ में कोई ऐसा उपद्रव नहीं खड़ा कर रहे हैं। मुझे कोई ऐसा नहीं लगा कि यहां कोई बीभत्सता है। एक वाक्य कहूं? बाहर कामदेव है, अंदर महादेव है। इस सूत्र को यदि याद रखोगे, तो मन कभी बिगड़ेगा नहीं। तुलसीजी ने 'मानस' में कहा है-

तात तीनि अति प्रबल खल काम क्रोध अरु लोभ ।

ठीक है? ये खल है। फिर भी, इन तीन को यदि पहले हम देखें तो किसी के पीछे 'देव' शब्द लगा है? 'क्रोधदेव' ऐसा कहा जाता है? 'लोभदेव' ऐसा कहा जाता है? 'देव' शब्द लगा है तो मात्र काम के पीछे लगा है; कामदेव। काम को मेरे देश के ऋषिओं की अंत:करण की पावन वृत्ति ने 'देव' कह दिया। ये शब्द बहुत कुछ उद्घाटित कर देता है। और 'मानस' में ये भी कहा है कि तेजस्वी को कभी छोटा न समझे और उसमें काम का भी जिक्र है। पुष्प का धनुष्य लेकर निकलता है, लेकिन त्रिभुवन को घायल करता है; उसे छोटा न समझे। एक शे'र सुनाऊं? दीक्षित दनकौरी-

पानी इतना नहीं कि दरिया कहे उसे।
इतना भी कम नहीं कि कतरा कहे उसे।

इतना पानी नहीं है कि उसको हम 'दरिया' बोल दे; लेकिन इतना भी कम नहीं कि कतरा कहे उसे। भजन हो तो काम में इतना पानी नहीं है कि हम उसे दरिया बोल दे लेकिन भजन न हो तो एक चिनगारी जला सकती है; 'मानस' क्या कहता है?

भए कामबस जोगीस तापस पावँरन्हि की को कहै ।
देखहिं चराचर नारिमय जे ब्रह्ममय देखत रहे ।।
अबला बिलोकहिं पुरुषमय जगु पुरुष सब अबलामयं।
दुइ दंड भरि ब्रह्मांड भीतर कामकृत कौतुक अयं ।।

ये छोटे से काम की ताकत तो गज़ब है! लेकिन यदि भजन है, तो कोई मुश्किल नहीं। घोड़े कितने ही वो हो लेकिन सारथि सही हो तो चिंता नहीं। इन्द्रियां घोड़ें हैं, जीवात्मा सारथि है। खबर नहीं, किस बिषय के प्रदेश में इन्द्रियां हमारे जीवनरथ को खींच ले जाए, लेकिन मेरे गोस्वामीजी ने व्यवस्था कर दी 'लंकाकांड' में -

ईस भजनु सारथी सुजाना ।
बिरति चर्म संतोष कृपाना ।।

हमारे सौराष्ट्र में घोड़े की कई जातियां है, इनमें एक घोड़ी का नाम है 'माणकी।' स्वामीनारायण संप्रदाय के आदि संस्थापक भगवान सहजानंद स्वामी जो घोड़ी पर बैठते थे उस घोड़ी का नाम भी था 'माणकी।' दूसरे संदर्भ में कहूं तो कामवृत्ति माणकी घोड़ी है लेकिन मणका सारथि है। वृत्तियां तो कहीं भी जाएगी; हम इन्सान है, लेकिन भजन गिरनें से बचा लेगा। सारथि का काम निम्न माना गया है; सारथि की पदवी कोई अच्छी पदवी नहीं है। 'महाभारत' में तो कर्ण को बार-बार बहुत बड़ा एक शब्द देकर तेजहीन करने की कोशिश होती है, 'सूतपुत्र।' लेकिन ऐसा नहीं है; कभी-कभी महान व्यक्ति भी सारथि बनते हैं; योगेश्वर कृष्ण सारथि बने थे। भजन जैसा सारथि कौन? ईश्वर का भजन पतन से रोकता है, ऐसी कई महापुरुषों की अनुभूति है। और कामदेव का हम केवल एक पक्ष ही क्यों देखते हैं? 'रामचरित मानस' में तो कामदेव को परोपकारी कहा है। क्या सन्मान दिया है मेरे गोस्वामीजी ने! देवताओं ने जब काम को चढ़ाया कि तू शिवसमाधि को विक्षिप्त करने जा, तब उसने कहा कि शिवविरोध में मेरा मृत्यु निश्चित है लेकिन मैं परहित के लिए जाऊं। ये आदमी परोपकारी है। 'रामचरित मानस' परमात्मा से जुड़े दो परोपकारीओं की कथा है; एक गीधराज जटायु, जिसको परमात्मा ने अपना बाप बनाया। और दूसरा परोपकारी कामदेव, जिसको परमात्मा ने अपना बेटा बनाया। यहां परोपकारी की महिमा है। हर एंगल से देखो; दंभ छोड़कर गाओ। और मेरे गोस्वामीजी कहते हैं-

काम आदि मद दंभ न जाते।

सातों सोपानों में आप को काम का वर्णन मिलेगा; इसको केवल विकार समझकर अनदेखा न किया जाए; गुरु की कृपा से सही रूप में, निज अनुभव से भजन बढ़ाकर उसका सही दर्शन किया जाए। मैं आज आप को निमंत्रित कर रहा हूं, काम के बारे में कुछ दर्शन करने के लिए।

एक ओर बात। ज्यादातर काम का वर्णन शृंगाररस में है। लेकिन मैं आप को कहकर आगे बढ़ूं कि

शृंगाररस शिकाररस नहीं बनना चाहिए; जब शृंगाररस शिकाररस बनता है, तो आदमी का पतन होता है। तो, हर एंगल से, खूले मन से देखना पड़ेगा। और बस में कन्डक्टर कहते हैं, जिसे वमन होता हो वो प्लीज़ पीछे बैठे; वैसे बाप! कथा सुनने से जिसको चक्कर चढ़े, वमन होने का डर लगे, वो प्लीज़ आख़िरी सीट पर बैठे।

दुनिया की एक महान ऊर्जा का सदुपयोग क्यों न किया जाए? इसलिए मैं 'दर्शन' शब्द का प्रयोग कर रहा हूं, और मेरी जिम्मेवारी से; 'रामचरित मानस' में सात दर्शन है। एक तो प्रधानरूप में रामदर्शन है, मूल में। वाल्मीकिजी को लूं तो सीताचरित्र महत् है। 'वागर्थाविव सम्पृक्तौ' भिन्न है ही नहीं। और रामदर्शन अंतर्गत जानकीजी का दर्शन, भरतजी का दर्शन, लक्ष्मणजी का दर्शन-सब दर्शन समाहित है। तो, एक रामदर्शन।

दूसरा दर्शन है शिवदर्शन; उसके अंतर्गत उमादर्शन और हनुमंतदर्शन आ जाते हैं। तीसरा दर्शन है धर्मदर्शन; जिसमें दशरथजी आ जाते हैं, मिथिलेश आ जाते हैं, शीलनिधि आ जाता है, सत्यकेतु आ जाता है। 'धर्मधुरंधर गुणनिधि ज्ञानि।' माँ कौशल्या भी, 'धर्मसनेह उभय मति घेरी' सभी माताएं। चौथा दर्शन है, अर्थदर्शन। लंका की समृद्धि, मिथिला की समृद्धि। प्रमाण-

जो संपदा नीच गृह सोहा ।
सो बिलोकि सुरनायक मोहा ।।

हिमालय की समृद्धि, महाराज दशरथजी की समृद्धि, क्या कहूं? 'मानस' में विपुल मात्रा में अर्थदर्शन है। पांचवां दर्शन है, कामदर्शन। विपुल मात्रा में, सप्त सोपानों में कामदर्शन भरा है। कोई हाथ-पैर धोकर इस मंदिर में प्रवेश करे; स्वच्छ चित्त से, मन से। छठ्ठा दर्शन है, मोक्षदर्शन। और सातवां दर्शन है, विश्वदर्शन। माँ कौशल्या के सामने, भुशुंडि को भीतर। कई लोग कहते हैं कि दर्शन भीतर होता है, बाहर नहीं। सब जगह दर्शन ही दर्शन है। ओशो ने एक बार कहा था, 'सत्य भीतर है, अंदर खोजो;' रामदुलारी बापू कहते थे, 'सत्य सर्वत्र है, कहीं भी खोजो।' मैं कहता हूं, 'सत्य खोया कहां है कि खोजे?' मेरा तुलसी कहता है-

सीय राममय सब जग जानी ।
करउँ प्रनाम जोरि जुग पानी ।।

कहां खोया है? हम पहचान न पाए, यही तो एक समस्या है। 'मानस' का सातवां दर्शन है, विश्वदर्शन।

उदर माझ सुनु अंडज राया ।
देखेउँ बहु ब्रह्मांड निकाया ।।

परमात्मा के उदर में समस्त ब्रह्मांडों का दर्शन मेरे भुशुंडिजी ने किया है और उभय घडी में; और वैज्ञानिक सत्य है कि ये पृथ्वी के अगल-बगल में यहां का समय, दूसरी जगह ये समय नहीं है। यहां दो-पांचसौ साल चली जाए तो दूसरी जगह एक क्षण ही होती है। तो, ये बिलकुल वैज्ञानिक हो जाएगा कि कागभुशुंडिजी ने दो घड़ी में ये सब देख लिया हो तो ये वैज्ञानिक सहमति के साथ है। हर जगह एक समय थोड़ा है?

तो, बाप! मैं आप को निमंत्रित करता हूं कामदर्शन के लिए। कोणार्क में सूर्यमंदिर है इसलिए मैंने कहा था कि कामसूत्र पर हम गायन करने जा रहे हैं लेकिन सूरज के उज़ाले में, अंधेरे में नहीं। और यहां हम कामदर्शन करने जा रहे हैं, जहां भीतर बैठा महादेव साक्षी है, उसी के आशीर्वाद में। तो, मैंने दो पंक्तियां उठाई है 'बालकांड' से। नाम भी बदला है, पंक्तियां भी बदली है। और वो दो पंक्तियां निरंतर पाठ करनेवाले आप जानते हैं; जानना अच्छा है, लेकिन बहुत जानना भी मत। भजन में रूकावट डालती है जानकारी।

तो, ये है 'मानस-कामदर्शन' की छोटी-सी भूमिका। मुझे स्मरण है कि सालों पहले ईस्ट आफ्रिका में भी एक नगर में कामदेव का प्रकरण लेकर कथा गाई गई थी। फिर यहां ये अवसर आया है। 'मानस' के आधार पर, जहां-जहां तुलसी ने दर्शन पेश किया है वहां गुरु की नितांत कृपा से हम नव दिन संवाद करेंगे।

कथा के प्रारंभ में थोड़ा क्रम इस प्रवाही परंपरा में ध्यान रखना होता है। आप जानते हैं, 'मानस' के प्रथम सोपान 'बालकांड' में सात मंत्रों में मंगलाचरण किया गया है। मुझे बहुत अच्छा लगता है कि मंगलाचरण किस-किस प्रकार से होते हैं वो चर्चा आचार्यों ने की है। मुझे तो इतना समझ में आया कि ये शब्द देकर हमारे पूर्वजों ने कितना बड़ा संकेत कर दिया कि मंगल उच्चारण बहुत अच्छा है, लेकिन इससे भी बढ़ियां है मंगल आचरण। इसलिए सात मंत्रों में मंगलाचरण किया।

वर्णानामर्थसंघानां रसानां छन्दसामपि।
मङ्गलानां च कर्तारौ वन्दे वाणीविनायकौ।।

वहीं से लेकर 'स्वान्तः सुखाय तुलसी रघुनाथगाथा' तक सप्त मंत्रों में मंगल आचरण किया। गोस्वामीजी को श्लोक को लोक तक पहूंचाना था। अग्नि प्रगट हो जाए और फैल जाए तो ख़बर नहीं कितने को जला दे! लेकिन अग्नि शांत हो गया है और उसमें कुछ सुगंधित द्रव्य डाले हैं तो अग्निमुक्त अग्नि, धूप फैलती है तो सब को खुश्बू से भर देती है। श्लोक अग्नि है, जलाता नहीं, कभी नहीं; लेकिन लोकबोली धूप है, फैल जाती है। गोस्वामीजी ने लोकबोली का आश्रय लिया। लोकबोली खुश्बू फैला देती है।

तेरी खुश्बू का पता करती है,
मुझ पे अहसान हवा करती है।

-परवीन शाकिर

तुलसीजी ने पांच सोरठें में पांच देवों का स्मरण किया। पांच सोरठें में बिलकुल लोकबोली में पांच देवों का स्मरण-गणेश, सूर्य, विष्णु, महादेव, पार्वती। और फिर वंदना आई तो वंदना कहां की?

बंदउँ गुरुपद कंज कृपा सिंधु नररूप हरि ।
महामोह तम पुंज जासु बचन रबि कर निकर ।।

नरहरिरूप गुरु की वंदना गोस्वामीजी ने की। जो कृपासिंधु है, नरके रूप में आश्रित के लिए हरि है। और पहला प्रकरण गुरुवंदना, जिसको मेरी व्यासपीठ विनम्रता से कहा करती है, 'मानस गुरुगीता।'

बंदउँ गुरु पद पदुम परागा ।
सुरुचि सुबास सरस अनुरागा ।।
श्रीगुर पद नख मनि गन जोती ।
सुमिरत दिब्य दृष्टि हियँ होती ।।

गुरुवंदना गोस्वामीजी ने की। और व्यक्तिगत भरोसा और हमारी प्रवाही परंपराओं में भी गुरुमहिमा अतुलनीय है। कोई गुरु में न माने तो उनकी मौज लेकिन गुरुपद के बिना हम जैसों का क्या? इसलिए युवान भाई-बहनों को जब मुझे कहना है तब कहूं, स्वतंत्रता आप की लेकिन संकेत जरूर कर सकता हूं कि जीवन में कोई मार्गदर्शक रखना श्रद्धा के साथ; जो हमें गुमराह होने से बचाए, जो अहेतु कृपा करे; हम से उसका कोई लेना-देना न हो तो भी वो छाया बनकर हमारा पीछा करे। 'लंकाकांड' में, 'मानस' में तो लिखा है-

कवच अभेद बिप्र गुर पूजा ।
एहि सम बिजय उपाय न दूजा ।।

हमारा अभेद कवच है गुरु। कोई चाहिए। तो, गुरुवंदना गोस्वामीजी ने की। ज्यादा विस्तार न करूं। नेत्र पवित्र किए गुरुचरणरज से इसलिए जगत पूरा प्रणम्य लगा।

काम रस है, लेकिन राम महारस है

'रामचरित मानस' में कामदर्शन किस-किस रूप में पाया जाता है उसकी हम चर्चा कर रहे हैं। प्रसन्नता से सुने। जैसे कल आप से व्यासपीठ का निवेदन रहा कि हमारे यहां षड्दर्शन है; मेरी जिम्मेवारी से मुझे महसूस हो रहा है कि 'मानस' में सप्तदर्शन है- रामदर्शन, शिवदर्शन, धर्मदर्शन, अर्थदर्शन, कामदर्शन, मोक्षदर्शन, विश्वदर्शन। कोर्णाक की कथा को 'मानस-कामसूत्र' कहा गया था। उस समय भी एक निवेदन किया गया था कि हमारे यहां सूत्र भी बहुत है। किसी भी पावनी परंपरा के आचार्य को तीन ग्रंथ पर भाष्य करना अनिवार्य माना गया- 'ब्रह्मसूत्र,' 'भगवद्गीता,' 'उपनिषद।' तभी उसका आचार्यपद प्रमाणित माना जाता है। तो, बहुत बड़ा सूत्रपात भगवान बादरायण व्यासजी ने किया था; छोटे-छोटे वाक्यों में 'ब्रह्मसूत्र' दिया। देवर्षि नारदजी ने 'भक्तिसूत्र' दिया, जिसको 'प्रेमसूत्र' भी कहते हैं। भगवान कपिलाचार्य ने इस विश्व को एक सूत्र दिया, 'सांख्यसूत्र।' ओशो ने जिसको आंतर्जगत का वैज्ञानिक माना है ऐसे भगवान पतंजलि ने हम सब को 'योगसूत्र' दिया। गौतमादि महर्षिओं ने 'न्यायसूत्र' दिया।। वात्सायनादि महापुरुषों ने 'कामसूत्र' दिया। बहुत सूत्र है। बहुत संक्षिप्त में कही जाए सारसर्वस्व बात, जिसको करीब-करीब सूत्र माना गया। आप ने मार्क किया होगा, मेरी व्यासपीठ भी करीब-करीब सूत्रात्मक बोल रही है। क्योंकि सूत्र जल्दी पकड़ में आता है। मणके बिख़र जाते हैं, धागा जल्दी पकड़ा जाता है।

मैं मेरे श्रोताओं को एक निवेदन करूं कि बाप, वात्सायनादि महापुरुषों ने जो 'कामसूत्र' दिया, यद्यपि बहुत अद्भुत है; मैं जिम्मेवारी के साथ कह रहा हूं, लेकिन वर्णन अतिरेक भी है। इतना ज्यादा कहने की शायद जरूरत नहीं। और इस काल में तो नहीं ही नहीं। आप सीधा 'कामसूत्र' पढ़ो तो मुश्किल हो सकती है, यदि आप का कोई समर्थ गुरु है और आप का चित्त सम्यक् है तो कोई मुश्किल नहीं है; लेकिन गड़बड़ हो सकती है। मैं 'मानस' गाता हूं इसलिए प्लीज़ मत समझिए कि मैं 'मानस' का पक्षधर हूं, लेकिन 'मानस' में जो कामदर्शन है वो अधिक प्रेक्टिकल है।

एक भिखारी एक गली में भीख मांगने गया। एक बहन ने उसको पूरी तरह से भिक्षा दी। उसने पेटभर खाया। बहुत संतुष्ट हुआ। उसी समय पडोश में एक दूसरी बहन ने उसे बुलावा दिया कि 'आओ, मैं भी तुम्हें भिक्षा दूं।' उसने कहा कि 'मैंने भरपेट खा लिया है, अब जरूरत नहीं है।' तो, पडोशी बहन ने कहा कि 'मैं तुम्हें रोटी नहीं दूंगी, तूने जो खा लिया है उसे पचाने की औषधि दूंगी।' ये जरूरी है; सीधा 'कामसूत्र' खाने से पेट तो भर जाएगा, पचेगा नहीं यदि तुलसी की औषधि नहीं लोगे! तुलसी का कामदर्शन मेरी दृष्टि में औषधदान है। और तुलसीवाली औषधि दे सकता है कौन?

किसी को प्रणाम करने की इच्छा नहीं होती तो समझना, दोष नेत्र का है, वर्ना सब प्रणम्य है। हमारे जीवन में जितनी अच्छाइयां है, इनमें जीवन के घट में जितनी कम अच्छाइयां है वो खाली जगह में बुराइयां प्रवेश कर जाती है। इसलिए खाली जगह मत दो। मेरे गोस्वामीजी 'सीयराममय' जगत कहते हैं, उपनिषद 'ब्रह्ममय' कहता है। मेरे तुलसी ने तो कहा है 'निजप्रभुमय देखहि जगत केहि सन करहि बिरोध,' विरोध अस्वस्थ मानसिकता का परिचय है। यदि विद्या भी विरोध करे तो विद्या को भी अविद्या बनने में देर नहीं लगती। विद्या विक्रय और विवाद की मानसिकता से मुक्त होनी चाहिए। विद्या केवल विवेक के साथ संयुक्त होनी चाहिए। पूरा जगत रमणीय, प्यारा, वंदनीय है।

मेरे गोस्वामीजी सब को प्रणाम करने का उपक्रम शुरू कर देते हैं। सब से पहले पृथ्वी के देवता, ब्राह्मणदेवता को प्रणाम किया। मोह से निर्मित संदेहों से समाज को मुक्त करने का जिसका धर्म है ऐसी भूदेवी परंपरा को तुलसीदास ने पहला प्रणाम किया। फिर सज्जनों की वंदना, साधुसमाज की वंदना, संसार के सभी द्वंद्वों की वंदना और सब की वंदना की। ऐसे वंदना करते-करते, आप जानते हैं, हनुमानजी की वंदना तुलसीजी करने लगे-

प्रनवउँ पवनकुमार खल बन पावक ग्यानघन ।
जासु हृदय आगार बसहिं राम सर चाप धर ।।

श्री हनुमानजी की वंदना की। कोई गुरु मिल जाए और आप की निष्ठा उस पर बैठ जाए तो उसे गुरु बना लेना। दुनियादारी के गीतों में तो जिन्दगीभर के साथ की बात होती है लेकिन अध्यात्मजगत में तो जनम-जनम के साथ की बात होती है। गुरु में जनमोजनम का है साथ। तो, बाप! जहां कोई ऐसा शरण मिल जाए उनकी शरण ग्रहो। और मेरी समझ में, ऐसा कोई न मिले तो हनुमानजी तो है ही। हर युग में प्राप्य।

चारों जुग परताप तुम्हारा ।
है प्रसिद्ध जगत उजियारा ।।

जय हनुमान ज्ञान गुन सागर ।
जय कपीश तिहुं लोक उजागर ।।

तो, हनुमानजी को हम गुरु मान सकते हैं। तो-

महाबीर बिनवउँ हनुमाना ।
राम जासु जस आप बखाना ।।

तो, श्री हनुमानजी महाराज की पूज्यपाद गोस्वामीजी ने वंदना की। हनुमंतवंदना के साथ आज की प्रथम दिन की कथा को मैं विराम की ओर लिए चलता हूं।

'रामचरित मानस' में सात दर्शन है। एक तो प्रधानरूप में रामदर्शन है, मूल में। और रामदर्शन अंतर्गत जानकीजी का दर्शन, भरतजी का दर्शन, लक्ष्मणजी का दर्शन सब दर्शन समाहित है। दूसरा दर्शन है शिवदर्शन; उसके अंतर्गत उमादर्शन और हनुमंतदर्शन आ जाते हैं। तीसरा दर्शन है धर्मदर्शन; जिसमें दशरथजी आ जाते हैं, मिथिलेश आ जाते हैं, शीलनिधि आ जाता है, सत्यकेतु आ जाता है। चौथा दर्शन है अर्थदर्शन। लंका की समृद्धि, मिथिला की समृद्धि। पांचवां दर्शन है, कामदर्शन। विपुल मात्रा में, सप्त सोपानों में कामदर्शन भरा है। छट्ठा दर्शन है मोक्षदर्शन। और सातवां दर्शन है विश्वदर्शन।

सदगुर बैद बचन बिस्वासा ।

संजम यह न बिषय कै आसा ।।

और तुलसीरूपी औषधि कौन-सी औषधि देता है? मान लो हमनें बहुत काम भोग लिया; 'भगवद्गीता' ने 'धर्मअविरुद्ध काम मैं हूं' कहा है; इसका सीधा-सादा तात्पर्य ये हो गया कि कृष्ण काम है। और कृष्ण कौन है? ब्रह्म है। और कृष्ण कहते हैं कि काम मैं हूं, तो हो गई बात सिद्ध कि काम भी ब्रह्म है। सावधानी से सुनिएगा। और 'मानस' में कहा है कि काम कृष्ण का बेटा है, 'कृष्ण तनय होइहि पति तोरा । बचनु अन्यथा होइ न मोरा ।।' और बाप की झलक बेटे में आती है। बाप की आवाज़ और बेटे की आवाज़ एक-सी होती है। हमसकल, हमआवाज़, हमस्वभाव।

तो, एक बस्तु सिद्ध हो जाती है कि धर्मअविरुद्ध काम ब्रह्म है। धर्म जिसको हां कहे वो काम ब्रह्म है। आप भोजन करते हैं तो 'उपनिषद' तो कहते हैं 'अन्नं ब्रह्मेति व्यजानात्।' हम ब्रह्म खाते हैं। तो, अन्न ब्रह्म है वैसे अन्न ज्यादा खा लो तो ये ब्रह्म वमन हो सकता है; वैसे काम ब्रह्म है लेकिन काम का अतिरेक वमन कर सकता है। हर जगह सम्यक्ता नितांत आवश्यक है। मेरी व्यासपीठ कहना चाहती है, काम खराब नहीं है, कामी खराब है; क्रोध इतना खराब नहीं है, क्रोधी खराब है; लोभ इतना खराब नहीं है, लोभी खराब है; रिवोल्वर खराब नहीं है, चलानेवाला खराब है। इसलिए मैं कहता हूं कि यदि काम भरपेट भोग लिया है तो औषधि चाहिए। और वो तुलसी देता है और तुलसी की औषधि क्या है?

जासु नाम भव भेषज हरन घोर त्रय सूल ।

सो कृपाल मोहि तो पर सदा रहउ अनुकूल ।।

हरिनाम। आज नहीं तो कल कुबूल करना पड़ेगा, एक मात्र औषधि। आज किसी ने मुझे पूछा है कि 'आप हरिनाम पर बल देते हैं तो हरिनाम जपने के कोई नियम है?' एक है, यस। एक कड़ा नियम निभाना होगा और वो है जानबूझकर हार जाना; एक मात्र नियम। जो समझकर, जानबूझकर हार जाता है वो हरिनाम से धन्य हो जाता है। छोड़ो जीतने की जिद्द। एक शे'र है, इसमें एक शब्द है 'दानिस्ता।' 'दानिस्ता' का मतलब है जानबूझकर, समझकर-

इस खेल में एक दानिस्ता मुझसे हार गया,

यही अहसास मुझे जिन्दगीभर मार गया ।

हरिनाम; मीरां की आवाज़ में गाईए। एक बात ओर ध्यान दें, मेरा कोई ठिकाना नहीं, मैं कहा जाऊं! बांसुरी कृष्ण ने राधा को दी थी लेकिन आवाज़ मीरां को दी थी। तब तक गोविंद चूप थे कि आवाज़ कहां रखूं? कृष्ण की आवाज़ सुननी है तो मेड़ता की मीरां को सुनना पड़ेगा। भगवान योगेश्वर कृष्ण ने जब ये धराधाम छोड़ा तब कुछ चीज़ कुछ विशिष्ट व्यक्तिओं को दान देते गये। बांसुरी राधा को दी थी लेकिन ये मधुरी आवाज़ मीरां को दी थी; 'भगवद्गीता' अर्जुन को दी थी और पादुका श्री उद्धवजी को दी थी; मोक्ष कंस को दिया था; कई को मोक्ष दिया लेकिन कंस को दिया हुआ मोक्ष अतुलनीय। सर्वश्रेष्ठ मित्रपद श्रीदामा को दिया था; सुदामा को नहीं, श्रीदामा को; श्रीदामा एक दूसरा गोप है। पूरा का पूरा निचोड़कर प्रेम ले गई कृष्ण से ब्रजांगना। प्रेम ब्रजांगना को दिया। आंसू दिया नंद-जशोदा को। और द्वेष रुक्मिणी को छोड़कर अन्य राणिओं को दिया। रुक्मिणी समर्पिता है। तो, कुछ बांटकर गया ये आदमी।

तो, हरिनाम का एकमात्र नियम है हार जाना; और वो हरिनाम है औषधि। भरपेट ब्रह्म को खाने के बाद वमन होने की संभावना है। और कृष्ण यदि 'काम मैं हूं' कहते हैं तो काम हो गया ब्रह्म और अधिक काम का भोग वमन कर सकता है। सम्यक्ता आवश्यक है और ये तुलसी हमें औषधि देगा। पढ़ लीजिए 'कामसूत्र' लेकिन भिक्षा में औषधि देनेवाला तो एक मात्र तुलसी है। अब, गोस्वामीजी को किसी ने पूछा कि आप ने तो काम को खल कह दिया-

तात तीनि अति प्रबल खल काम क्रोध अरु लोभ ।

तो, ये तीन तो महाख़ल है। तो ये तो गाली दी, ये तो विकार उत्पन्न हो गया, औषधि कहां है? लेकिन वो ही तुलसी कहते हैं कि खल को सुधारा जाता है;

खलउ करहिं भल पाइ सुसंगू ।

सत्संग से खल धीरे-धीरे भल हो सकता है; काम धीरे-धीरे राम बन सकता है। काम रस है लेकिन राम महारस है। काम रस है, उसे दंभ से नकारा नहीं जा सकता। लेकिन हम चुक गए कि कोई महारस भी है, रामरस भी है; परमात्मा रसमय है, 'रसो वै सः।' आप को पता है, काम का सीधा-सादा अर्थ क्या होता है? मूलतः वेद में काम का एक अर्थ है इन्सान की इच्छा; इच्छा मानी काम। एक बार जो परम ब्रह्म है उसको इच्छा हुई कि मैं अकेला न खेलूं, औरों को साथ में लूं। इसी इच्छा से जगतप्रपंच खड़ा हुआ है। काम मानी इच्छा। इच्छा का अतिरेक आदमी को कामी बना देता है। काम तो जीव की आवश्यकता है। 'काम बात कफ लोभ अपारा।' काम वात है, क्रोध पित्त है और लोभ कफ है और आयुर्वेद के महापुरुष कहते हैं कि वात-पित्त-कफ इन्सान की बोड़ी में आवश्यक है; सम्यक्मात्रा में हो तो आदमी तंदुरस्त, किसी एक का प्रकोप हो तो बीमार। सम्यक्ता तुलसी दिखा रहे हैं। इसलिए तुलसी का कामदर्शन मुझे ज्यादा व्यवहारु लगता है। 'मानस' में तीन प्रकार की इच्छा है: अधम, मध्यम और उत्तम।

सुत बित लोक ईषना तीनी ।

केहि कै मति इन्ह कृत न मलीनी ।।

ये दवा है। पुत्र की इच्छा, ये काम है। वहां काम थोड़ा चेतन है, एक नई चेतना की मांग है, वहां काम जड़ नहीं है। दूसरी कामना है, वित्तेषणा। वित्त मानी पैसा; ये जड़ काम है। और जड़ काम आदमी को गेरसमझ बहुत करा देता है। और सब से अधम काम है वो लोकेषणा, प्रतिष्ठा। काहे की प्रतिष्ठा? परमात्मा ने मानवदेह देकर ओलरेडी आप को प्रतिष्ठित कर दिया है। ओर क्या चाहिए? भीख मत मांगो। कई लोग सुतेषणा से मुक्त है, कई लोग वित्तेषणा से मुक्त है लेकिन साधक आकर लोकेषणा में फंस जाता है! ये इच्छा भी काम है। 'मैं पैसे को टच नहीं करता', ऐसी प्रतिष्ठा मुझे मिले ऐसी चाह रहती है।

तो, जगी थी परमतत्त्व को इच्छा, बना संसार। प्लीज़, ठीक से समझना। पृथ्वी, सृष्टि उत्पन्न कैसे हुई? हाथ हिलाने से? नहीं। शास्त्र क्या कहता है? यद्यपि वो अनीह है, इच्छामुक्त है, वहां कोई इच्छा नहीं है। लेकिन बहु होने की इच्छा हो गई उसको, रास खेलने की इच्छा हो गई योगेश्वर कृष्ण को, इसलिए मन भी उधार ले लियो; तो, 'मानस' उसका स्पष्टीकरण करता है। आप ठीक से सुन रहे है ना? कोई वमन की बात नहीं है ना?

सृष्टि उत्पन्न कैसे हुई? एक भ्रूकुटिभंग से ब्रह्मांड बना है। भ्रूकुटि क्यों? वो उसका मूल तत्त्व है भ्रूकुटि। तो, मेरे श्रावक भाई-बहन! काम का एक अर्थ है परमतत्त्व को जगी इच्छा। जगत को कृतकृत्य करने के लिए इच्छा को बुलाई और हुआ जगत। फिर ब्रह्म ब्रह्म के साथ खेलने लगा, 'ब्रह्म लटकां करे ब्रह्म पासे।' ये है अद्वैत।

तुम मेरे पास होते हो, कोई दूसरा नहीं होता...

तो, मेरे श्रावक भाई-बहन! काम का एक अर्थ है, इच्छा। इच्छा मूलतः तीन। और गोस्वामीजी जब समस्त विकारों से मुक्ति की कामना करते हैं तब यही है उसके मन में कि प्रकोप न हो जाए काम का। तुलसी समन्वय करते हैं। और यदि जीवन में किसी विकार की मात्रा बढ़ गई हो तो भी देर मत करो; इन्सान है हम, जब समझ में आए, सम्यक्ता में आ जाए। जिन पंक्तिओं का हमनें आश्रय लिया है उन पंक्तिओं का सीधा-सादा अर्थ समझ लो।

पसु पच्छी नभ जल थलचारी ।

भए कामबस समय बिसारी ।।

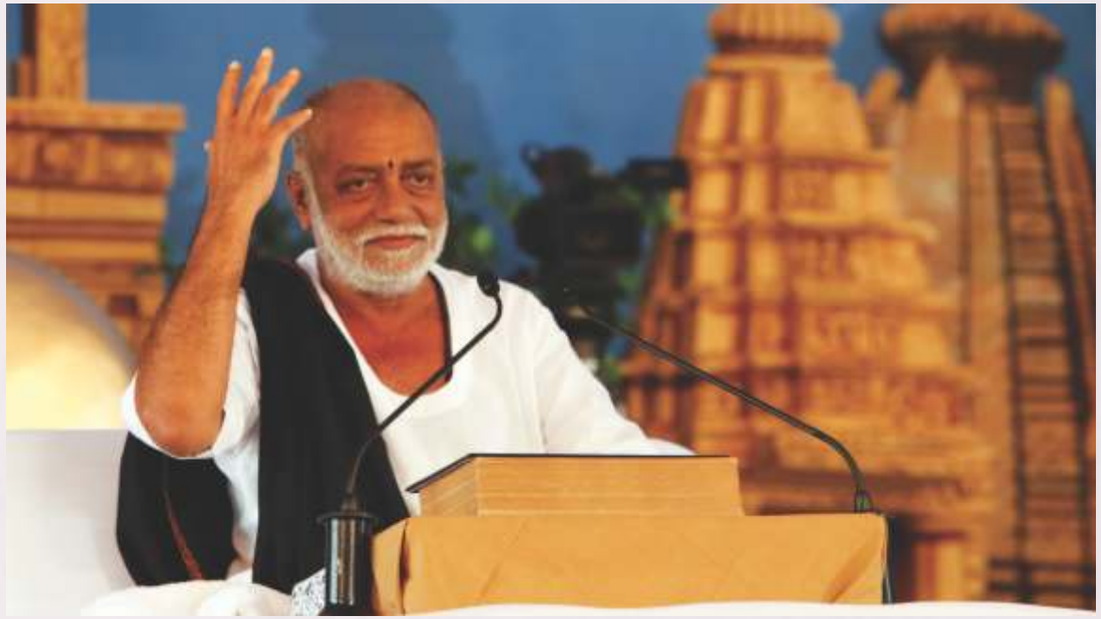

सिद्ध बिरक्त महामुनि जोगी ।

तेपि कामबस भए बियोगी ।।

गोस्वामीजी कहते हैं, जब कामप्रभाव फैला तब क्या हालत हुई दुनिया की? पशु, पक्षी, कोई भी जीव, सब कामाधीन हो गए। और तुलसी क्या औषधि देते हैं, सुनिए। तुलसी औषधि देते हैं कि कोई भी जीव का कामवश होना स्वाभाविक है; काम उनमें पड़ा हुआ एक तत्त्व है। लेकिन बुरा कब हुआ? 'समय बिसारी', समय चुके। आदमी समय, संबंध, स्थान, योग्यता-सब कुछ चुक जाता है, तब दोष हो गया। पूरी प्रकृति समय में चल रही है। आदमी समय चुकता है तो काम आदमी को कामी बना देता है; क्रोध आदमी को क्रोधी बना देता है; लोभ आदमी को लोभी बना देता है। आज के टी.वी.कल्चर ने बच्चे को अधिक चतुर बना दिया है। विज्ञान भी संभलकर नहीं अपनाया गया तो वो ख़तरा बन सकता है। ये वोट्स-एप और फैस-बूक ने आदमी को कितना व्यस्त बना दिया है! समय संभाला जाए।

एक टाईम-टेबल बनाया है परमात्मा ने। समय पर आदमी अपने विषयों पर जाए वो प्रकृति है लेकिन समय बिसारकर चले तो ये विकृति के सिवा ओर कुछ नहीं। सब चेतन-जड़ में सूक्ष्मतम रूप में काम होता है, लेकिन होता है।

सिद्ध बिरक्त महामुनि जोगी ।

तेपि कामबस भए बियोगी ।।

बहुत ऊंची पंक्तिवालें लोगों को गिनाया- सिद्ध, विरक्त, महामुनि, जोगी। ये भी कामवश हो गये! कामप्रभाव बहुत प्रबल है। मूल में भजन नहीं, तो मुश्किल हो सकती है। इसलिए मेरे कल के निवेदन पर ध्यान रखना, आक्रमण तो सब पर होगा लेकिन जो भजेगा वो बचेगा। ऊर्जाएं आदमी पर आक्रमण करेगी लेकिन जो भजन करेगा वो अति से बच जाएगा; पतन की बेला में हरि बीच में आ जाएगा। एक भाई ने मुझे आज ये भी पुछा कि 'मैं बहुत भजन करता हूं लेकिन अंतिम क्षण में पतन हो जाता है।' तो भी आश्वासन लो कि भजन करते-करते पतन हो गया ना! इज्जत उसकी जाएगी। हकारात्मक लो, ये आवश्यक है।

तो, कितने-कितने उच्च लेवल के लोगों की गिनती है? ऐसे-ऐसे समर्थ लोग भी कामवश हो गए! तो, इसकी गंभीरता बताई गई। ये बहुत शक्तिशाली उर्जाएं है। ऐसे समय में-

सीम की चाँपि सकइ कोउ तासू ।

बड़ रखवार रमापति जासू ।।

जिसकी सुरक्षा हरि करे; अपना सद्गुरु है उसे तकलीफ़ नहीं पड़ेगी। इसीलिए चाहिए कोई बड़ा आश्रय। वसंतऋतु में आम के पेड़ पर मोर आता है फिर आम बैठते हैं। कभी-कभी वसंतऋतु में आम का पेड़ मोर से इतना फलाफूला होता है, फिर फल लगते हैं; लगता है कि इतना जो रहेगा ना तो ख़बर नहीं पूरा आम का पेड़ छीप जाएगा! लेकिन दो ख़तरें है; या तो आम के पेड में रोग लग जाए या तो जोर से कोई हवा का झोंका आए तो ये मोर गिरा दे। फिर भी लगने लगेंगे बहुत मोर फिर भी कुछ रोग हो जाए; आख़िर क्षण कुछ रोग हो जाए या तो कोई इन विकारों का प्रकोप हो जाए तो ये सब आम के जितनी मात्रा में फल आने चाहिए वो नहीं आते। ऐसे समय में साधक को चाहिए कोई बड़ा रखवाला। तुलसीदासजी ने चर्चा का अवसर नहीं रहने दिया; कह दिया-

यह गुन साधन तें नहिं होई ।

तुम्हरी कृपाँ पाव कोइ कोई ।।

इस पंक्ति का पाठक लोग गलत अर्थ करते हैं, यहां तो लिख दिया कि ये गुन साधन से नहीं होता तो क्या साधन छोड़ दें? नहीं, अकर्मण्यता का संदेश नहीं है; साधन तो खूब करना पड़ेगा लेकिन साथ-साथ समझना पड़ेगा कि मेरे साधनों से कुछ होनेवाला नहीं, आख़िर में कृपा होगी तभी घटना घटेगी। साधन छोड़ना मत। होगा कृपा से लेकिन कर्म करना पड़ेगा। जितना लिखा, गुरुमुख़ होना चाहिए। खूब आगे बढ़ो, परमात्मा ने दी हुई ऊर्जा का सदुपयोग किया जाए लेकिन सतत स्मरण में रखो कि उनकी कोई सीमा है और मैं उस सीमा में रहूंगा तो किसी की ताकत नहीं कि कोई दूषण वो सीमा नांघकर हमें परास्त कर सके; क्योंकि मेरी सुरक्षा राघव कर रहा है। इसको ध्यान में रख़े, सीमा। कवि 'काग' ने इसी सूत्र पर एक पद लिखा-

एना खांभा कोईथी ना खेसवाणा,

रखोपा जेने रामना...

तो, सीमा का ध्यान रख़े। कल पूज्य जगद्गुरु रामानुजाचार्य बता रहे थे कि बापू, काम की आलोचना कैसे की जाए? क्योंकि चतुर्पुरुषार्थ में काम के बाद सीधा मोक्ष बताया है। यदि ठीक से गुजरो तो काम के बाद नरक नहीं है, मोक्ष है। सीमा में रहो, बाउन्ड्री में ख़ेलना अच्छा है। ये बाउन्ड्री ही हमारी स्वतंत्रता है। इस कथा को ज्यादा जागृति से सुननी पड़ेगी, जाग्रत जरूर रहना। मेले में गुमराह होने की संभावना होती है; प्लीज़, किसी की ऊंगलि पकड़ रखो। वो ऊंगली तुम्हें परतंत्र भी न बनाए और सीमा का अतिक्रमण भी आप न कर सको, ऐसा शील का दान करे वो सद्गुरु है। तो, बड़े-बड़े मुश्किल में पडते हैं! मुझे लगता है, तुलसी का कामदर्शन निकट पड़ता है इसीलिए मैं उसकी चर्चा में हूं। आगे की चर्चा कल करेंगे।

कथा के संक्षिप्त क्रम में कल हमनें आख़िर में हनुमंत वंदना की थी। उसके बाद भगवान के अन्य सखाओं की वंदना की गई। उसके बाद जानकीजी की वंदना की गई। पहले माँ की वंदना। उसके बाद कहा, मन-वचन-कर्म से मैं रघुनायक की वंदना करता हूं। उसके बाद नाममहिमा। नव दोहे में, पूर्णांक में गोस्वामीजी ने परमात्मा के नाम की महिमा गाई है। ये 'नामचरित मानस' भी है। कुछ पंक्तियां-

बंदउँ नाम राम रघुबर को।

हेतु कृसानु भानु हिमकर को ।।

बिधि हरि हरमय बेद प्रान सो ।

अगुन अनूपम गुन निधान सो ।।

तो, नाम की बड़ी महिमा है। रामकथा का सार तो केवल हरिनाम है-

नहीं कलि करम न भगति बिबेकू।

रामनाम अवलंबन एकू।।

कलियुग में रामनाम इहलोक-परलोक में परम कल्याण देता है। रामनाम का मतलब, मेरा राम संकीर्ण नहीं है, महासिंधु है, राम विशाल है। आप कृष्ण, दुर्गा, जिसस, महावीर, बुद्ध, शिव, अल्लाह-कोई भी नाम बोलो, क्या फर्क पडता है? कई लोग निंदा करते हैं कि ये क्या तोतारटण? एक ही काम करो सुखी होना हो तो, अपने कानों को मोबाईल फोन की तरह साईलन्ट मोड़ पर रख दो, निंदा-स्तुति लाख़ हो, असर ही न हो। 'शरफ़' साहब का शे'र है ना-

हजार आफतों से बचे रहते हैं वो,

जो सुनते जियादा हैं, कम बोलते हैं।

उसके बाद कथा का क्रम थोड़ा आगे बढ़ता है। कथा का इतिहास बताया कि सब से पहले ये कथा की रचना शिवजी ने की। और रचना करके अपने मानस में रख़ा, इसलिए नाम रख़ा 'रामचरित मानस।' योग्य समय पर ये कथा शिव ने पार्वती को सुनाई। वो ही कथा शिव ने अधिकारी समझकर कागभुशुंडि को दी। वो कथा भुशुंडिजी ने गरुडजी को सुनाई। वहीं से ये कथा धरती पर आई, तीरथराज प्रयाग में याज्ञवल्क्य के पास और परमविवेकी याज्ञवल्क्य ने ये कथा प्रपन्न भरद्वाजजी को सुनाई। पूज्यपाद गोस्वामीजी ने ये कथा सुकर क्षेत्र में गुरु से सुनी। गोस्वामीजी ने जगत पर उपकार करके उसको भाषाबद्ध करने का शिवसंकल्प कर लिया।

फिर गोस्वामीजी हमें तीरथराज प्रयाग ले चलते हैं। वहां महाकुंभ मेला हुआ। कई साधुसंत प्रयाग में आए और उसमें एक थे परमविवेकी याज्ञवल्क्य। उसने भरद्वाजजी से बिदा मांगी; भरद्वाजजी जिज्ञासा करते हैं, 'मुझे एक संदेह है, मेरा समाधान करो।' 'मेरे भाई-बहन, कभी ईश्वर के बारे में संदेह हमें घीर ले तो किसी बुद्धपुरुष के चरन पकड़ने चाहिए। भरद्वाजजी ने चरण पकड़े। भरद्वाजजी ने ब्रह्मजिज्ञासा की, रामतत्त्व क्या है? और इस ब्रह्मजिज्ञासा को सुनकर याज्ञवल्क्य मुस्कुराए। याज्ञवल्क्यजी कथा सुनाने लगे, 'मैं जरूर आप को कहूं लेकिन मैं भूमिका में पहले आप को शिवकथा सुनाऊंगा।' देखो, ये वैष्णव और शैव का सेतु बना। तुलसी का ये अवतारकार्य था। हम इकठ्ठे होते हैं, एक नहीं होते!

संग सती शिवजी अगस्त्यमुनि के पास कथा सुनने जाते हैं। कुंभज ऋषि ने विश्वनाथ शिवजी की पूजा की। पूरी कथा सुनाई। शिव और पार्वती कैलास जाने निकले; बीच में दंडकवन से गुजरते हैं। उस त्रेतायुग की रामकथा विद्यमान थी, उसमें सीता के वियोग में रोते हुए राम का दर्शन करके सती को रामतत्त्व पर संदेह होने लगा। फिर कथा आगे बढ़ती है।

एक भिखारी एक गली में भीख मांगने गया। एक बहन ने उसको पूरी तरह से भिक्षा दी। उसने पेटभर खाया। बहुत संतुष्ट हुआ। उसी समय पड़ोश में एक दूसरी बहन ने उसे बुलावा दिया कि 'आओ, मैं भी तुम्हें भिक्षा दूं।' उसने कहा कि 'मैंने भरपेट खा लिया है, अब जरूरत नहीं है।' तो, पड़ोशी बहन ने कहा कि 'मैं तुम्हें रोटी नहीं दूंगी, तूने जो खा लिया है उसे पचाने की औषधि दूंगी।' ये जरूरी है; सीधा 'कामसूत्र' खाने से पेट तो भर जाएगा, पचेगा नहीं यदि तुलसी की औषधि नहीं लोगे! तुलसी का कामदर्शन मेरी दृष्टि में औषधदान है।

हमने काम का प्रभाव जाना है, स्वभाव नहीं जाना है

'रामचरित मानस' अंतर्गत कामदर्शन, उसको केन्द्र में रखते हुए हम और आप संवादीसूर में वास्तविक दर्शन कर रहे हैं। स्वस्थ और प्रसन्न चित्त से सुनिए। 'कामसूत्र' के बारे में जिन महानुभावों ने चिंतन किया, विचार किया, सूत्रपात किया; लेकिन कुछ आचार्यों ने अनुभव भी किया, जैसे कि जगद्गुरु आदि शंकराचार्य। जब शास्त्रार्थ करना था और प्रश्न कुछ ऐसे थे जिसमें बिना अनुभव जवाब देना असंगत वाग्विलास था। आप जानते हैं, जगद्गुरु परकाया प्रवेश करते हैं, यानी जाति बदलते हैं; क्योंकि कुछ बातें करने के लिए अनुभव चाहिए। और मूल सूत्र समझ में रहना चाहिए। 'गीता' का एक अमृतवचन है, 'सूत्रेमणिगणा इव।' सूत्र एक ही होता है, मणि एकसो आठ होते हैं। एक ही सूत्र के आधार पर एकसो आठ व्याख्याएं हो सकती है। कभी मणि खो भी जाए, कभी नया जुड़ जाए। हो सकता हैं, पुराने मणके टूट जाए, निकालने चाहिए; नए मणके देशकाल के अनुसार सूत्र की शोभा बढ़ाने के लिए बदलने चाहिए।

मेरे श्रोता, सावधान! मेरे पास एक प्रश्न है परवाज़साहब, कि बापू, शताब्दीओं से महापुरुष इस देश में हर मज़हब में आए लेकिन इतना बड़ा मुलक, बहुत कम विशिष्ट व्यक्ति निर्माण कर पाया! कोई एक शंकराचार्य मिला, कोई एक पयगंबर मिला, कोई एक बुद्ध मिला। काम तो भोगा गया सदियों से, वर्ना इतनी आबादी नहीं हो सकती। काम रुका नहीं था। काम का आवेग बढ़ता जा रहा है, एक बाढ़-सी है। टी.वी.कल्चर ने तो किनारे डूबो दिए! और ये बाढ़ किसको कहां ले जाए, अल्लाह जाने! कोई चाहिए कर्णधार जो अपने जलपोत में हमारा मार्गदर्शन करे।

बुद्ध का एक बहुत बड़ा पहुंचा हुआ शिष्य था मालुक्यपुत। जब बुद्ध की बातें चलती थी तब मालुक्य बहुत दूर बैठता था। ओलरेडी ये पहुंचा हुआ था। कोई एक बात कहीं अटकी थी। एक दिन बुद्ध उसे निकट बुलाते हैं और कहा, 'मालुक्य, मुझे लगता है तुम्हारें मन में कोई प्रश्न है।' 'हां।' 'पूछो।' 'और मैं पूछुंगा तो आप से ही, क्योंकि जवाब आप से ही मिलेगा।' 'तुमने कैसे समझ लिया कि मैं जवाब दे सकता हूं?' 'आज के जमाने के जलपोट के कर्णधार आप है।' 'कैसे तूने ऐसा मान लिया?' 'आध्यात्मिक व्यक्ति में जो चार चीज़ होनी चाहिए वो मैं आप में देख रहा हूं।' किसी प्रबुद्ध व्यक्ति अपने बारे में कुछ नहीं कहेगी अथवा तो उसको पता ही नहीं कि मैं क्या हूं! वो तो कोई दूर बैठा हुआ जो पीता है वो ही परख़ सकता है। इसलिए शिकायत मत करो, जहां जगह मिले, व्यासपीठ को भरपेट पीओ। जब तक आप के मन में शिकायत है, आप धार्मिक हो सकते हो, आध्यात्मिक नहीं। परख़ने के लिए आवश्यक है मालुक्यपुत की बातें, वर्ना हम बहुत छले गए हैं बहुत शताब्दीओं से। बहुत छले गए हैं हम, तथाकथित क्षेत्रों ने

छलने में कोई कमी नहीं बरती खूबसूरत बेनर के नीचे! खूबसूरत बेनरों के नीचे जमाना सदियों से छला गया है। चाहिए कोई बुद्ध, तरोताज़ी पयगंबरी, शंकराचार्य।

चार लक्षण मालुक्यपुत दिख़ाता है। ये कामसूत्र समझने के लिए आवश्यक है। पहली बात, मालुक्यपुत कहता है, मुझे लगता है जाग्रत पुरुष की निशानी है, जिसकी आंखें विशाल हो और निर्मल हो। मैं आप की आंखें देख़ता हूं। आप की आंखें एक पूरा प्रवचन है; आप का गद्य एक महाकाव्य है। बुद्धपुरुष की आंखें विशाल मानी साईज़ में नहीं, विचारधारा में, दृष्टिकोण में, चिंतन में। दूसरा, जिसकी आवाज़ वश न करे, मुक्त करे। वाणी का प्रभाव होता है; आदमी पकड़े जाते हैं। नहीं, ये अध्यात्म-आदमी की वाणी नहीं मानी जाती। मोहम्मद पयगंबरसाहब कितना बोले होंगे? जिसस कितना बोले होंगे? कबीर कितना पढ़े थे? तो, जिसकी आवाज़ हमें मुक्त करे, सुना और मुक्ति की वर्षा होने लगे। और महिनों तक कानों में गुंजे वो आवाज़।

तीसरा लक्षण मालुक्यपुत कहता है, जिस व्यक्ति में चेतन-अचेतन किसी के प्रति कभी संदेह पैदा न हुआ हो। हम तथाकथित आध्यात्मिक है; हर बात पे संदेह करते हैं! जिसके प्रति आप को आदर है ऐसे वंदनीय महापुरुषों की चित्र या छबि पूजागृह में मत रख़ो, रख़ना है तो दिल में रखो। सद्गुरु यदि दिल में होगा तो तुम्हें निंदा करने का मौका ही नहीं मिलेगा। मैं सोच रहा हूं, इतनी कथा गाई जा रही है, हम इन्सान है, लेकिन फिर भी द्वेष, निंदा! रख़ो अपने कानों को साइलन्ट मोड़ पर। आप को पता है? एक बार झूठ बोलने से चालीस दिन का भजन ख़तम हो जाता है! काश, हम बुद्धों को दिल में बसाते! जिस व्यक्ति को किसी पर कभी संदेह पैदा न हुआ हो; बहुत कठिन है। हम तो कदम-कदम पर संदेह के रोगी है! आवाज़ मुक्त करें; आंखें निर्मल और विचारधारा विशाल हो; 'मानस' में लिखा है-

जटा मुकुट सुरसरित लोचन नलिन बिसाल ।
नीलकंठ लावन्यनिधि सोह बालबिधु भाल ।।

चौथा लक्षण, दूर की बात न करे, निकट की बात करे। जैसे कबीर कहते हैं, 'मैं देख़ा निज नयन की देख़ी।' अपनी आंखों से जो देख़ा है। मालुक्यपुत ने ये चार बात रख़ी और कहा कि अब अवसर हो तो मैं पूछुं? मालुक्य पूछता है कि 'मैं मोक्ष की चाह लेकर आप के पास आया था; आप की आंखों में, आवाज़ में, संदेहमुक्त मन में मैं इतना डूब गया, मैं मोक्ष के लिए निकला था, मोक्ष की तो बात ही नहीं करते!' बुद्ध ने कहा, 'छोड़, हम यहां बैठे है और कोई शिकारी कुटियां के पीछे कोई मृग को मारने के लिए निकले, निशाना चुक जाए, तीर तुम्हें लग जाए, जख्म भी हो जाए, हम सब को घीर ले और उस समय तू क्या चाहेगा?' बोले, 'उस समय तो मैं वो ही चाहूंगा कि कोई तीर ख़ींच ले और औषधि लगा दे।' बुद्ध बोले, 'क्या उस समय तू पूछेगा कि पहले तीर निकालना मत, पहले बताओं कि ये तीर किसने मारा? क्यों मारा? कैसे मारा?' बोले, 'पहले तीर निकालना।' तो बुद्ध बोले, 'मैं तीर निकालने का काम कर रहा हूं। मोक्ष की बात छोड़, ये दूर की बात है।'

इस जमाने में कर्णधार वो है जो हमें धरा की बात सुनाए, हमारें घर की बात समझाए। कुछ ये बातें न हो सकी इसलिए आबादी बढ़ी, विशिष्ट इन्सान हम पैदा नहीं कर पाए। काम तो बहुत भोगा गया। क्यों शिवाजी पैदा नहीं होते? एक ही वाक्य मेरी जिम्मेवारी से कहना चाहूंगा कि काम तो बहुत भोगा जा रहा है लेकिन वासना की दृष्टि से भोगा जा रहा है, उपासना की दृष्टि से भोगा गया होता तो हर घर में राम पैदा होता। और क्या 'रामचरित मानस' काम को नकारता है? वसिष्ठजी का

सामर्थ्य ये है कि विधिलेख को मिटा सकते हैं; ब्रह्मर्षि हैं। दशरथजी गए जिज्ञासा लेकर कि इतनी रानियां है, पुत्र नहीं है। तथाकथित व्याख्याकारों ने इन महत्त्व के संकेतों पर पर्दा रख़ा है या तो ड़र लगा है! शालीनता से सूत्र को साफ कर के बताओ, समाज की श्रद्धा टूटेगी नहीं, द्दढ़ होगी। वसिष्ठजी के वचन मैं उद्धृत करना चाहता हूं। 'मानस' का ये कामदर्शन है-

सृंगी रिषिहि बसिष्ठ बोलावा ।
पुत्रकाम सुभ जग्य करावा ।।

शब्द क्या है? 'पुत्रकाम।' 'काम' शब्द है। कोई ऐसा काम हो कि पुत्र प्राप्त हो और राम प्राप्त हो। कोई विशिष्ट व्यक्ति जन्मे। पुत्रकामना है; और पुत्र कैसे प्राप्त होगा? 'जनम हेतु सब कहँ पितु माता।' पुत्र आकाश से नहीं गिरता। लेकिन वसिष्ठजी बहुत सांकेतिक शब्द जोड़ते हैं। यज्ञभावना से पुत्र पैदा किए जाते थे, उपासना से। 'भगवद्गीता' में कृष्ण दो-टूक बोले हैं, प्रजोत्पत्ति के लिए जो युझ होता है वो काम मैं हूं। वहां कोई और नहीं होता, वहां चेतना मेरी होती है। वासनाभरे काम से संसार में कामदर्शन हुआ इसलिए विभूतियां पैदा न कर पाए हम। मैं आज की कथा के प्रारंभ में शब्द बोला हूं, स्वस्थ और प्रसन्नचित्त से सुनना। गड़बड़ की तो जिम्मेवारी तुम्हारी; मैं जो बोलूं उसकी जिम्मेवारी मेरी, आप किस अर्थ में लेते हो वो जिम्मेवारी तुम्हारी।

हमने काम का प्रभाव जाना है, स्वभाव नहीं जाना है। जो आदमी काम का प्रभाव जानता है वो गिरता है, स्वभाव जानता है वो उपर उठता है। स्वभाव क्या है? 'मानस' में लिखा है; इसलिए 'मानस-कामदर्शन' विशेष दर्शन है। भगवान शंकर के प्रसंग में 'मानस' में लिखा है कि ताड़कासुर नामक राक्षस जब बहुत प्रबल हुआ और दैवी समाज को आतंक से घीर कर परास्त करने लगा, तब ड़रे हुए देवता ब्रह्मा की शरण में जाते हैं। और ब्रह्माजी सब को समझाकर कहते हैं कि ताड़कासुर को शंकर के द्वारा जो पुत्र हो वो ही मार सकता है। तो बोले, क्या करे? बोले, आप एक उपाय करे। कामदेव को भेजकर ईश के मन में क्षोभ पैदा करो। और काम आता है और काम सोचता है। चिंतन देखिए काम का, स्वाभाविक चिंतन। उसने सोच लिया कि शिवविरोध में मेरी मृत्यु निश्चित है, लेकिन इतना समाज यदि मेरे मोत से बच जाता है तो मैं बलिदान देने के लिए तैयार हूं। और बलिदान का संकल्प दैवी विचार है। ये काम का स्वभाव है। परहित के लिए जो अपना बलिदान देता है उसकी संतलोग प्रशंसा करते हैं; इस मुद्दे पर काम राजी हुआ, तैयार हुआ। ये उनका स्वभाव है। हम स्वभाव नहीं पकड़ सकते, प्रभाव में आते हैं। और प्रभाव चौसठ कलाओं से डालता है ये आदमी हम पर, इनमें से चार कहूं।

कोई भी ललित कला के मूल में काम है। जहां भी रस है, मूल में काम है। काम के बिना रस की सृष्टि नहीं हो सकती। आज मुझे एक प्रश्न पूछा गया है कि जब भरद्वाजजी ने भरत के तैनात में रिद्धि-सिद्धियां पेश कर दी तो सब लोग, स्त्रीआदि भोग में अवधवासी डूब गए, इतना वैभव भरद्वाजजी ने पैदा किया। लेकिन एक बचा भरत। भगवान ने बचाया। और दूसरों का पतन हुआ। भरद्वाजजी देख रहे हैं कि ये आदमी इस रस में गोता लगा देता है कि उसके पीछे एक महारस पड़ा है उसकी प्रतीक्षा करता है? भरत ने प्रतीक्षा की। आज के जमाने में स्वादु भोजन के पहले स्टार्टर होता है। अब स्टार्टर में ही निकल जाए उसने कुछ खाया ही नहीं! काम तो स्टार्टर है, राम स्वादुभोजन है। यद्यपि काम में रस है। प्रत्येक रस की भीतरी अवस्था में काम होता है। ओशो ने जरा जोर से कह ड़ाली बात; और परंपरा इतना गहरा

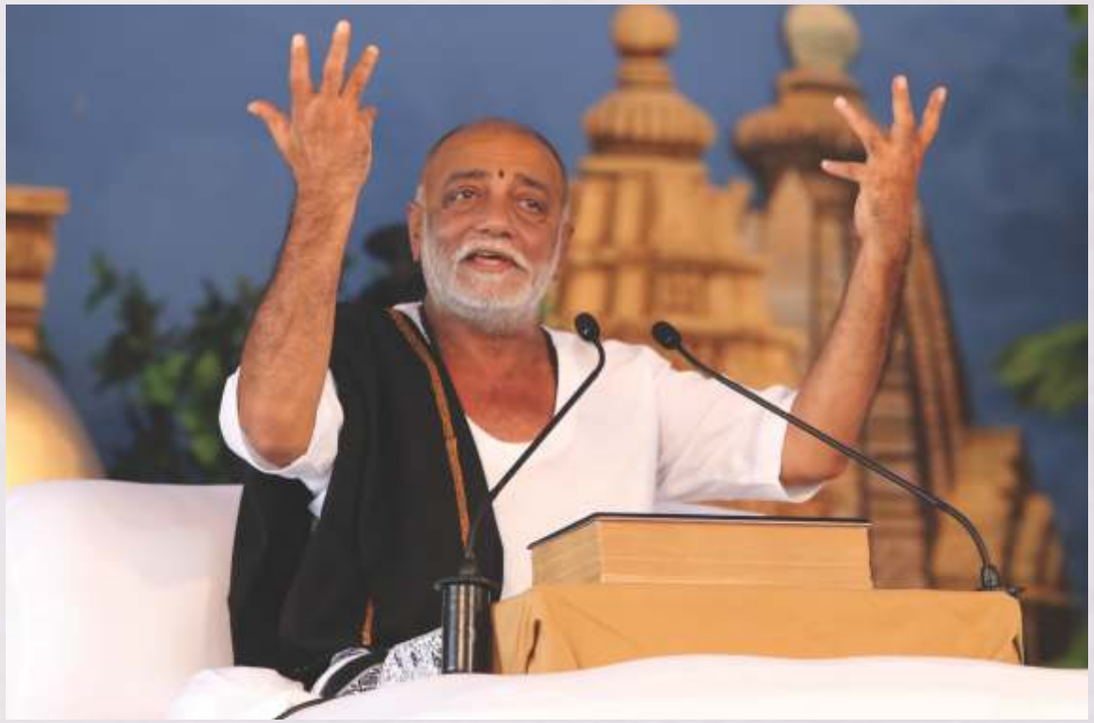

तो, गायन काम की कला है, कोई भी वाद्य काम की कला है। तीसरा, गाते समय गानेवाले की विभिन्न स्वाभाविक मुद्राएं काम की कला है। प्रत्येक गायक की अपनी विभिन्न मुद्रा होती है। चौथा, काम की कला नृत्य है। नर्तन कामकला है। तुलसी कामप्रभाव का वर्णन करते हैं कि-

जागइ मनोभव मुएहुँ मन बन सुभगता न परै कही।

काम ने ऐसा प्रभाव डाला, गायन-वादन-नर्तन-मुद्रा से ऐसा प्रभाव डाला कि मुड़दें के मन में भी रस की सृष्टि होने लगी! कामरस की इतनी ताकत है कि मूए को ज़िंदा करे तो रामरस ज़िंदा को चिरंजीवी कर दे। और खरे मौके पर मित्र बहुत काम करता है। सही मित्र होना चाहिए। कामदेव के खास एक मित्र है, उस मित्र का नाम है, शीतल सुगंध मंद वायु। ये कामदेव के मित्र हैं। 'मदन अनल सखा सही।'

सर्द झोंकों से खुलते हैं बदन में शोले,
जान ले लेगी ये बरसात करीब आ जाओ।

ये कामप्रभाव है। कामआग को बढ़ानेवाले ये तीन प्रभावक मित्र है, सुगंध मंद शीतल वायु।

जे सजीव जग अचर चर नारि पुरुष अस नाम।
ते निज निज मरजाद तजि भए सकल बस काम।।

तुलसी के एक-एक शब्द मंत्र है। कामप्रभाव हुआ तब क्या हुआ? जितने सजीव और निर्जीव, जड़-चेतन जिसका नारी-पुरुष नाम है, ये सब ने मर्यादा छोड़ दी, तो काम के वश हो गए। मर्यादा न तोड़ते, समय-बंधन-स्थान देख़ते तो रस अच्छा रहता। और जब कामप्रभाव होता है तो, हम सब के अनुभव होते है; कामप्रभाव सब से पहले व्रतधारी पर हुआ। तुम अक्कड

आघात सहने के लिए तैयार नहीं है। काम रस है, उसे कैसे नकारा जाए? कोई भी ललितकला के पीछे काम है। लेकिन वहां रुक गया वो महारस चुक गया!

भगवान राम सुबैल के शिख़र पर लैटे-लैटे देख़ते हैं कि रावण अभी तक तो कामरस में था लेकिन मेरा पदार्पण लंका में हुआ तो ये आदमी महारस में जा रहा है। महारस में जाने के बाद उसको मारना मुश्किल है, इसलिए विक्षेप किया ताकि लीला हो जाए। आदमी को चाहिए क्रीड़ा से लीला में प्रवेश करना। कामलीला नहीं मानी जाती, कामक्रीडा मानी जाती है। रामक्रीडा नहीं मानी जाती, रामलीला मानी जाती है। काम से आराम, आराम से विश्राम, विश्राम से परम विश्राम। ये तुलसी का क्रम है, मेरा नहीं है।

अवधवासी स्टार्टर में रह गए और भरतजी इस महारस में निमग्न हो गए। आज तक तुमने फिल्म-नाटक देख़े हैं, पैसे देकर देख़े हैं, रामकथा के उजाले में जितना स्वाद आता है वो उसमें आता है? और आप सब वो छोड़कर यहां क्यों बैठे है? भ्रम में हो तो माफ़ करे लेकिन मुझे लगता है कि हमें महास्वाद मिल रहा है। वो स्वाद बेकार है ऐसा नहीं, लेकिन इस स्वाद की तुलना में वो कम पड़ रहा है। संसार के विषयों में आदमी वासनाग्रस्त चित्त से नहीं, उपासनाग्रस्त चित्त से रहे तो हर घर में कनैया पैदा हो सकता है। 'मानस' हमें लौटाती है अपने घराने में। काम के रस में रहो लेकिन ध्यान में रखो कि एक और महारस आप की प्रतीक्षा में है।

तो, मेरी समझ में काम का प्रभाव हमने जाना है, स्वभाव नहीं जाना है। स्वभाव जानने से दोष की मुक्ति होती है। जब तक स्वभाव नहीं पहचाना गया तब तक दोष दिख़ता है। काम का स्वभाव कुछ अच्छा है; वो देव है। मैं जिस ढ़ंग से बोल रहा हूं उसी ढ़ंग से समझना; पागल मत रह जाना। कल मुझे एक अच्छी बात मिली कि बाप-बेटा घर में रहे और कोई आदमी बाप को मिलने आए तो करीब-करीब बेटा कहेगा, 'बैठो, मैं मेरे बाप से मिलवा देता हूं, रुको।' तो, सब कोई प्रभु से मिलने आए तो काम कह सकता है 'रुको, मैं राम से मिलवा देता हूं।' काम रोकता नहीं है, हम रुकने को तैयार नहीं है! हमारा अधैर्य है, भोगलालसा है, पागलपन है, मूर्छित मन है।

रस छोड़ना नहीं, महारस पाना है। त्याग इक्कीसवीं सदी में जरा आक्रमकता का परिचय देता है। महान का स्वीकार अपने आप त्याग करवा देता है। महास्वाद को पाना; चीज को अस्वाद कर के खाने की जरूरत नहीं, इसका स्वाद अपने आप कम हो जाएगा। तुलसी इस क्रम से हमें महारस की ओर लिए चलते हैं; उस परम विश्राम की ओर लिए चलते हैं। और ध्यान देना, जिस बस्तु से हमें परम विश्राम मिले, जहां से यात्रा शुरू हुई है उसको कभी भूलना मत। मूल को याद रखना।

काम प्रभाव ड़ालता है अपनी चौसठ कलाओं से। चार कला चौसठ में से। एक कला है, गायन। गायन काम की कला है। काम कदम रख़ता है गायन से। कोई अच्छा गाए, रस आए। आदमी अंदर डूबे तो गायन काम की कला मानी गई। दूसरा है, किसी वाद्य का वादन। वादन काम के प्रभाव का लक्षण है। सारंगी, संतुर, तबला-आजकल जितने-जितने वाद्य है, सब काम की कला है। क्यों रस आता है? कुछ शे'र-

वो मेरा सब कुछ था लेकिन नसीब न था 'फ़राज़,'
काश मेरा कुछ न होता, सिर्फ़ मेरा नसीब होता ।

●

प्रेममां जे थाय ते जोया करो,
दर्दने गाया विना रोया करो.

-कैलास पंडित

व्रत लेकर बैठोगे तो प्रभाव पहला पड़ेगा। स्थितिस्थापक रहो; जिसको आप ज्यादा दबाओ वो बहुत ज़ोर से उछलता है। मेरे गोस्वामीजी कामदर्शन में लिखते हैं, 'ब्रह्मचर्य व्रत'; जिन्हों ने ब्रह्मचर्य का व्रत लिया था उसको पहले प्रभावित कर दिया। दूसरा, 'संजम नाना।' नाना प्रकार के संयम निभाते थे ऐसा खाना, ऐसा पीना, इतने बजे उठना। मैं संयम का विरोधी नहीं हूं लेकिन सहज रहो; भूख लगे तो खा ले; कथा में भी भूख लगे तो बाहर जाकर खा लो, मैं मौका दूं तो! ध्यान देना, मेरे कहने पर उच्छृंखल मत हो जाना कि कोई नियम न निभाए। कोई गलत मेसेज न जाए, वर्ना तुम्हारी जिम्मेवारी। लेकिन धर्मों ने हमें जेल में बंद कर दिया है!

'ब्रह्मचर्यव्रत संजम नाना।' फिर? धीरज; 'धरी न काहु धीर।' थोड़ी धीरज रखते तो स्टार्टर के बाद महाभोजन मिलनेवाला था। लेकिन धीरज पर हमला काम ने कर दिया! फिर, धरम; धर्म पर प्रहार कर दिया। ज्ञान; बड़ी-बड़ी ज्ञान की बातें होती है, बाकी एक मिनट में ज्ञान चला जाता है आदमी का! ज्ञान पर हमला बोल दिया, विज्ञान पर हमला काम ने डाल दिया। मैं नाम लेना नहीं चाहता, एक-दो वैज्ञानिक ऐसे हुए, जिस पर कुछ एक नेटवर्क बनाकर काम प्रभाव डाला गया, उन्हों ने गोपनीय विज्ञान के रहस्यों को बेच डाले! विज्ञान खरीदा जा सकता है काम प्रभाव में। फिर 'सदाचार जप जोग बिरागा ।' सदाचार पर हमला हुआ; योग पर हमला हुआ; वैराग पर हमला हुआ। 'सभय बिबेक कटकु सबु भागा ।।' सब भयभीत होकर भागे! सब सद्ग्रंथरूपी गूफाओं में सूत्र छीप गए!

तो, गायन-वादन-मुद्राएं-नृत्य ये सब का प्रयोग काम करता है। लेकिन हम प्रभावित होने के कारण स्वभाव जान नहीं पाए। तुलसीदासजी ने तो नहीं लिखा लेकिन नारद पर जो काम का प्रभाव पड़ा तो शादी करने तक वो आदमी तैयार हो गया! विष्णु को गालियां देने लगा लेकिन जब सनतकुमारों ने नारद को पूछा कि भैया, तूने इतने प्रभाव में आकर विष्णु को इतनी गालियां दे दी तो बचाया तो उसने ही तुझे, अब तेरी समझ में कुछ आया? तब नारदजी का बहुत प्रसिद्ध जवाब है, 'फिर मुझे वो ही हरिनाम ने बचा लिया।' हरि का नाम प्रभाव से बचाकर स्वभाव में स्थित करेगा। तुलसी का पच जाए ऐसा शीलवान कामदर्शन; प्राहारिक कामदर्शन नहीं, प्रासादिक कामदर्शन; कामरस से रामरस की ओर हमें धक्का देनेवाला कामदर्शन।

अब मैं थोड़ा कथाक्रम उठाऊं। कल हम कथा में सुन रहे थे कि भगवान की कथा भरद्वाजजी ने परमविवेकी याज्ञवल्क्य को पूछी। और याज्ञवल्क्य ने उसे शिवकथा सुनाई। शिव और पार्वती कुंभज ऋषि से कथा सुनकर कैलास लौटे हैं। पार्वती का संदेह मिटा नहीं। सती को संदेह हुआ और परीक्षा करने गई। इस प्रसंग पर मैं हर वक्त कहता हूं कि किसी को किसी पर संदेह हो जाए तो उसको प्रामाणिक प्रयत्नों से समझाने की हर प्रकार से कोशिश करना फिर भी वो न माने तो जिद्द मत करना, हरि पर छोड़ देना। अपनी इच्छा के अनुकूल घटना न घटे तो समझना हरि इच्छा। सती परीक्षा लेने गई। सती ने रूप बदला। साहब, आप रूप बदल सकते हैं लेकिन स्वरूप नहीं बदल सकते, वाणी और वर्तन नहीं बदल सकते। एक कविता है-

तारों के तेज में चंद्र छूपे नहीं;
सूर्य छूपे नहीं बादल छायो,
भीड पड़े रजपूत छीपे नहीं,
दातार छूपे नहीं मांगन आयो ।

इसमें एक पंक्ति है, 'प्रीत छीपे नहीं, पीठ दिखायो।' कोई आदमी पीठ दिखाकर भाग जाए तो प्रीत छीपती नहीं। जितना वियोग इतनी प्रीत दृढ़। प्रीत का लक्षण है, वियोग में प्रगल्भ बनती है, छीपती नहीं। वो चाहेगी कि तू जा नहीं लेकिन प्रीत कम नहीं होगी जाए तो भी, दृढ़ होगी।

याद कर तूने कहा था, प्रेम ही संसार है,
ओ बसंती पवन पागल, ना जा रे, ना जा...

बहुत प्यारी पंक्तियां है; भले फिलम का गीत हो, गोपीगीत है। कृष्ण ग्यारह साल बाद जब मथुरा में गये होगे तब गोपी यही बोली में नहीं बोली होगी? मुझे तो बिलकुल गोपीगीत नज़र आता है। मलिन दृष्टि गलत अर्थ करे तो भाग फूटे हैं!

तो, बाहर का परिवर्तन होता है, स्वभाव नहीं बदला जाता। यहां के शिल्प में बाहर कामदेव है, अंदर महादेव है। और हमारी वास्तविकता ये है कि हम आगे दिखने में महादेव है, अंदर कामदेव है! यद्यपि इस शिल्प में योगविद्या भरी है, आंख चाहिए। और दूसरे चित्र दिखने में मन बिगड़ता है क्योंकि वो प्रदर्शन है; यहां दर्शन होता है।

सती ने रूप बदला लेकिन सीता बनकर राम के आगे आगे चलने लगी! स्वभाव न बदल सकी। पकड़ी जाती है। शिव के पास लौटती है। शिवजी ने पूछा, 'देवी, आप ने किस परीक्षा ली? समाधान हो गया?' सती ने छिपाया। जवाब दिया, 'महाराज! मैंने कोई परीक्षा नहीं की है, मैंने प्रणाम किया।' शिव को लगा कि शायद सच नहीं बोल रही है। ध्यान में शिव ने देखा तो सती ने जो-जो किया, सब देख लिया! लेकिन बोले नहीं; महादेव है। समझ तो गए कि सती ने चुक की है। और कोई बात नहीं लेकिन सीता बनकर गई तो सीता तो मेरी माँ है। राम की प्रेरणा हुई और शिव ने संकल्प किया कि जब तक सती का ये शरीर होगा, सती भी मेरे लिए जानकी बराबर होगी, मेरी माँ मानी जाएगी। विश्वनाथ कैलास पहूंचते हैं। अपनी प्रतिज्ञा का स्मरण करते हुए भवन के बाहर शिवजी समाधि के लिए बैठ जाते हैं। सती समझ गई कि मेरा त्याग हो चुका है। सत्ताशी हजार साल बीत जाते हैं। बाद में शिव जागते हैं, रामनाम का उच्चारण हुआ। सती ने जाना कि जगतपति जाग गए हैं। जाकर प्रणाम करती है। शिवजी उसको सन्मुख आसन देते हैं और रसप्रद कथा सुनाने लगे।

इस जमाने में कर्णधार वो है जो हमें धरा की बात सुनाए, हमारें घर की बात समझाए। कुछ ये बातें न हो सकी इसलिए आबादी बढ़ी, लेकिन विशिष्ट इन्सान हम पैदा नहीं कर पाए। काम तो बहुत भोगा गया। क्यों शिवाजी पैदा नहीं होते? एक ही वाक्य मेरी जिम्मेवारी से कहना चाहूंगा कि काम तो बहुत भोगा जा रहा है लेकिन वासना की दृष्टि से भोगा जा रहा है, उपासना की दृष्टि से भोगा गया होता तो हर घर में राम पैदा होता। और क्या 'रामचरित मानस' काम को नकारता है? शालीनता से सूत्र को साफ़ कर के बताओ, समाज की श्रद्धा टूटेगी नहीं, द्दढ़ होगी।

मानस-कामदर्शन-४

कृष्ण ने धर्मस्थापना की, राम ने सेतुस्थापना की और महादेव ने कामस्थापना की

'रामचरित मानस' के आधार पर हम इस कथा में 'मानस-कामदर्शन' की संवादी चर्चा कर रहे हैं। कथा पूरी हो और जब यहां से बाहर जाए और आप देखें कि किसी कारणवश एक आदमी किसी को मार रहा है। आप ने देखा है; अवश्य देखा है; आप साक्षी है। फिर एक दूसरी व्यक्ति ने उसके बारे में सुना कि कथा पूरी हुई तब एक आदमी को एक व्यक्ति मार रहा था। वो सुनकर सोचने लगा कि अरे, क्यों मारा? जिसको मारा उसको कैसा लगा होगा? अब, दोनों पक्ष ठीक है। किसी को कुछ हुआ वो सुनकर हमें विचार आए, हम चिंतन करे कि ऐसा तो नहीं होना चाहिए; ये अच्छा विचार है। जिसने देखा वो भी साक्षी है लेकिन दोनों में से एक भी हमारे जीवन का सत्य नहीं है। सोच अच्छी है कि कोई किसी को न मारे। लेकिन जिसको मारा उसको कैसी पीड़ा हो रही है, कहां मारा, क्या दर्द हुआ होगा, इसका न इन विचारक को पता है, न दर्शक को पता है। पता तो तभी हो सकता है जब कोई हमें मारे। और जो दर्द महसूस होता है वो जीवन का सत्य है।

आप स्वस्थ और प्रशांत चित्त से कामदर्शन सुने। कामसूत्र के बारे में हम सोचते हैं; स्वागत। कई लोग देखते भी है। भगवान जगद्गुरु शंकराचार्य को हम दार्शनिक कहते हैं। बुद्ध को हम साक्षी कहते हैं; स्वागत। मैंने कल भी जिक्र किया कि काम की कुछ चर्चा करने में शंकराचार्य को पुरुष जाति का परिवर्तन करना पड़ा था; जीवन का सत्य महसूस करने के लिए परकाया प्रवेश करना पड़ा था। जीवन का सत्य क्या है? कभी 'मानस काम-सूत्र', कभी 'मानस काम-दर्शन'; इरादा ये है कि जीवन के सत्य के साथ कहां मेल बैठता है? लाख बोले जाए हम, लाख शास्त्रों का दर्शन करें लेकिन जीवन का सत्य क्या है? धीरे-धीरे हम जीवनदर्शन की ओर चलें; यही इरादा है। इस सब्जेक्ट पर बोलने में मुझे पचपन साल लगे हैं! मैंने ये मुद्दा सडन नहीं उठाया। और अब चौथे दिन ये भी हो रहा है कि कामदर्शन पर यदि अल्लाह करे तो एक कथा ओर भी कहूं। जीवनसत्य जिसमें विशेष रूप में हो। केवल विचार प्रस्तुत हो, दार्शनिक मत हो, लेकिन जीवनसत्य न होने के कारण श्रोता को फायदा होगा, वक्ता कोरा रह जाएगा! इस जीवन के सत्य को दंभ से फटकारा मत करो। काम बुरा, तुलसी ने भी लिखा, लेकिन तुलसी के विशेष अर्थ को भी समझना पड़ेगा। वात्स्यायन, चार्वाक, ओशो, कृष्णमूर्ति, क्या कहते हैं सब? सत्य जहां से मिले ले लो। लेकिन -

उनकी गली का कोई दरीचा खुला न था।
राशिद किसे सुनाउं गली में तेरी गज़ल।

कल अहमद 'फ़राज'साहब की स्मृति में यहां सायंकाल एक सुंदर गज़लसंध्या का आयोजन हुआ। मुझे बहुत अच्छा लगा कि पाकिस्तानी शायर अहमद 'फ़राज'साहब का इस रूप में श्राद्धपक्ष में श्राद्ध किया गया। आज मेरे पास 'फ़राज़'साहब के कुछ शे'र है-

सलीका हो अगर भीगी आंखों को पढ़ने का 'फ़राज़,'
तो बहते हुए आंसू भी अक्सर बातें करते हैं ।

जयदेव की गोपी तो कहती है, गोविंद के विरह में मेरी आंख में आंसू आते हैं, तो घाटे का सौदा होता है कि आंसू की एक-एक सीढ़ी से गोविंद बाहर नीचे उतर रहा है। जब तक आंसू भरे थे तो कृष्ण मेरी आंख के गोकुल में सुरक्षित था। निनु मझुमदार कहते हैं गुजराती में -

एक डरे रेख न खेंचुं, भले हसे व्रजवाम,
रखे नयनथी नीर वहे तो संग वहे घनश्याम.
मेश न आंजुं, राम!

कहीं मेरी आंखों से गोविंद बाहर न चला जाए! स्थूलरूप में तो गया, यही तो हमारा एकमात्र मूल है। तो, 'फ़राज़' साहब फरमाते हैं आज के समय का शे'र-

ये वफ़ा तो उन दिनों हुआ करती थी 'फ़राज़,'
जब मकान कच्चे और लोग सच्चे हुआ करते थे।

बाप, पचपन साल लगे हैं! और ये तो मुझे पचपन साल लगे, 'महाभारत' में जाइए, बूढ़े भीष्म को कितने साल लगे काम का जीवनसत्य कहने में! करीब-करीब इक्तालीस दिन से मरणशैया पर है। दोनों पक्ष एक-दूसरों के विजय की स्पर्धा में घमासान डूबे थे! मैं नहीं जाऊंगा 'महाभारत' में, फिर मेरा निकलना मुश्किल हो जाएगा! लेकिन कामदर्शन है वहां इसलिए मैं थोड़ा संकेत करूं भीष्म का। शैल्य ने प्रतिज्ञा की कि यदि धनंजय जो कर्ण को मार दे तो मैं रथ से कृष्ण और अर्जुन दोनों को मार दूंगा। और कृष्ण ने सुना तो कहा, ''शैल्य, संभलकर बोल। तू भी सारथि है और मैं भी सारथि हूं। ठीक है कि कर्ण का उत्साह तू बढ़ा रहा है लेकिन जीवन के सत्य को समझ और तू बुलवा रहा है तो मैं बोलूं। यदि कर्ण ने धनंजय को मारा तो मैं तुम्हें और कर्ण को दोनों को मार दूंगा। प्रतिज्ञा की ऐसी-तैसी!''

अब दोनों पक्ष है। दोनों पक्ष में देवताओं है। दो देवता बाकी रहे, कौन किसके पक्ष में जाए? एक आकाश के देवता और एक धरती के देवता। कृष्ण पूछते हैं कि 'कौन किसके पक्ष में जाएंगे?' तब आकाश के देवता ने पहले कहा, 'मैं कर्ण के पक्ष में, क्योंकि सूर्य मेरे में है।' और धरती ने कहा, 'मेरे पर अधर्म बढ़ा है इसलिए मैं अर्जुन के पक्ष में।' और तभी नारद की एन्ट्री, 'श्रीमन् नारायण।' अद्भुत है ये देश जहां युद्ध में भी हरिनाम लिया जाता है! कई लोग कहते हैं कि हरिनाम में क्या है? मैं उसको 'मानस' से कहना चाहता हूं, अनुभव भी है कि हरिनाम तीन काम करता है। भरोसा करो। एक, किसी ने आप को श्राप दिया हो तो उसी क्षण श्राप खत्म कर देता है। दूसरा, मन क्रमशः निर्मल होने लगता है। और तीसरा, समाधि अपने आप उपलब्ध हो जाएगी। हरिगुण गाकर नारदजी चले गए। आख़िर में कर्ण गिरता है। कुंता को असर होती है।

युद्ध समाप्त हुआ। भीष्म के निर्वाण की बेला आई। कृष्ण अब अपने ईश्वररूप में है। और युधिष्ठिर को कहते हैं, समय जा रहा है। और भीष्म की आंखें बंद हो इससे पहले जीवन के जानने योग्य सत्य जान ले। अच्छी घटना जब घटती है तब अस्तित्व को पहले खबर होती है। वासुदेव का स्मरण कर रहे थे दादा भीष्म। और वासुदेव उतरे रथ से। युधिष्ठिर साथ में है। तभी युधिष्ठिर बहुत प्रश्न पूछते हैं। एक प्रश्न, वो श्लोक मुझे याद है फिर भी मैं नहीं बोलूंगा, मेरी साधुता बरकरार रखूंगा। भीष्म से युधिष्ठिर ने पूछा है, विषयभोग में रत दो

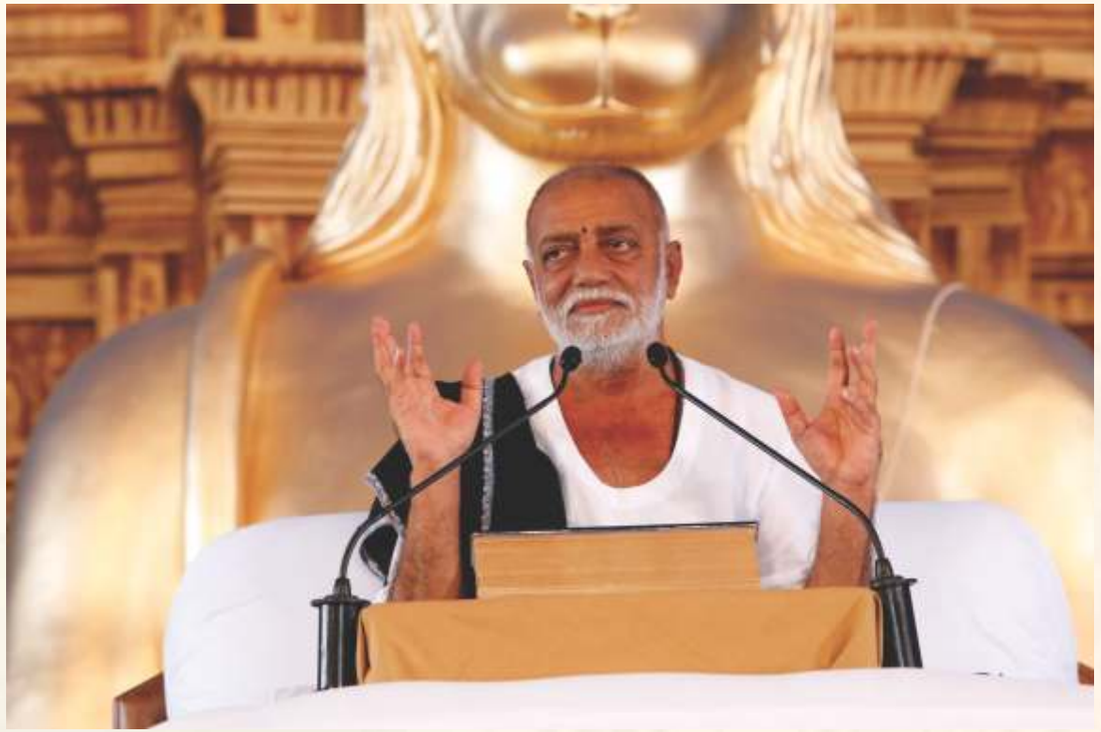

विजातीय व्यक्ति, इसमें कामरस किसको ज्यादा प्राप्त होता है? जवाब देनेवाला दादा और पूछनेवाला पौत्र! निर्दंभता तो देखो! और हम दंभ करते-करते मर गए, यार! मैं तो बहुत संभलकर बोल रहा हूं।

भीष्म को पूछा गया है; दादा है। कहने की रीत होती है। काम की चर्चा करने में भीष्म दृष्टांत का सहारा लेते हैं ताकि मर्यादाभंग न हो जाए और बात कृष्ण की साक्षी में कही जाए और युगों तक लोगों को प्रेरणा मिले। कहा, एक अश्वाभंग नामक राजा था। उसको सौ पुत्र हुए। फिर राजा ने एक यज्ञ किया और यज्ञ में राजा ने इन्द्र का अनादर कर दिया। इन्द्र को अच्छा नहीं लगा। और बदला लिया और इस राजा के सौ पुत्रों को मार दिया और राजा को स्त्री बना दिया। इस स्त्रीरूपा राजा अपने राज्य को छोड़कर निकल जाता है। बहुत सुंदर रूप दिया है। तपोवन में घूम रही है ये औरत। और तपोवन का एक महात्मा मोहित हुआ। जीवन का सत्य। और दोनों ने शादी कर ली। फिर सौ पुत्र हुए। और फिर वो भी मर गए। फिर इन्द्र प्रसन्न हो गया कि 'अब मैं तुझे फिर वो राजा बना दूं, बोल तुझे बनना है?' बोले, 'नहीं, मुझे तो स्त्रीरूप में ही रहना है।' फिर इन्द्र कहता है, 'तेरे सौ पुत्र जीवित होंगे; पुरुषशरीरवाले सौ पुत्र चाहिए कि स्त्रीशरीरवाले?' उसी समय कहा कि 'स्त्रीशरीरवाले सौ पुत्र को प्रगट करो क्योंकि मैं माँ हूं।' और फिर भीष्म उत्तर देते हैं कि वो स्त्री इसीलिए रहा कि रस की उपलब्धि ज्यादा किसको होती है उसको जीवन का सत्य समझकर वो राजा स्त्रीशरीर में रहना पसंद करता है।

यहां विचार नहीं है, अनुभव प्रस्तुत हो रहा है; जीवन का सत्य प्रस्तुत हो रहा है। कहा जाता है उपदेश

में कि निष्काम हो जाओ; या तो ज्यादा अतिरेक किया आज के चिंतकों ने कि पूरा भोग लो; दोनों असफल है। निष्काम होना आसान है, पूरा भोगना आसान है लेकिन सम्यक् रहना बहुत मुश्किल है। और 'मानस' का कामदर्शन ये कहता है कि बीच में रहकर जीओ। तुलसीदासजी कहते हैं कि विषय का तुम जितना भोग करो वैसे काम बढ़ता ही जाता है। जैसे अग्नि में घी डाला जाए तो अग्नि ओर भड़कता है। जीवन का सत्य समझना चाहिए। ख़री कसौटी बीच में है।

एक पंक्ति 'मानस' की मैं आप से इस संदर्भ में कहना चाहता हूं और वो ही जीवन का सत्य है। 'अयोध्याकांड' की पंक्ति है। भगवान राम वनवास दरम्यान वाल्मीकि आश्रम में गए, चित्रकूट से पहले। तब वाल्मीकिजी से प्रश्न पूछते हैं कि 'भगवन्! अब मैं कहां रहूं, ऐसी कोई जगह दिखाओ।' विज्ञान विशारद है वाल्मीकिजी; पहूंचे हुए महापुरुष है। चौदह स्थान बताए हैं। इसमें एक स्थान ये है-

काम कोह मद मान न मोहा ।

लोभ न छोभ न राग न द्रोहा ।।

मेरे भाई-बहन, 'गीताप्रेस' का भाषांतर पढ़ लीजिए; 'व्यंकटेशप्रेस' का भाषांतर पढ़ लीजिए; और सही भी है, क्या अर्थ होता है? 'जिसके हृदय में कामादि दोष न हो, आप उनके वश में कायम रहो।' तो इस पंक्ति का अर्थ ये हो गया कि काम हृदय में न हो तो ही भगवान वश में आए। सही अर्थ है; अब उसका विशेष और गुरुमुखी अर्थ। क्या कहते हैं? कामादि दोष न हो ऐसी बात नहीं है; कामादि दोष भले हो लेकिन उसका मद और दंभ जिसमें न हो उसके आधीन तुम हो।

मैं आप से पूछुं, क्या जीवन में काम जरूरी नहीं है? मैंने कल भी कहा, कृष्ण ने धर्मस्थापना की, राम ने सेतुस्थापना की और महादेव ने कामस्थापना की। जीवन में काम जरूरी है। जीवन में क्रोध जरूरी है। न हो तो ठीक है लेकिन वो तो बोला जाता है। समंदर के सामने ठाकुर ने क्रोध नहीं किया है? क्रोध जरूरी नहीं है? हमारे जैसे संसारीओं के लिए ये चर्चा है, महात्माओं के लिए नहीं। दुर्वा की तरह जो विनम्रता से झुक जाएगा उसे कोई नदी की बाढ़रूपी कामादि आवेग बहा नहीं ले जा सकेगा। जीवन के सत्य को इतनी विनम्रता से कुबूल करना चाहिए। कामरस तक रुक जाना नहीं है, तुलसी ने अपनी यात्रा काम से शुरू की है, सम्यक्। 'मानस' में एक शब्द तीन बार आया है, 'दीपशिखा।' एक बार जानकीजी के बारे में-

सुंदरता कहुँ सुंदर करई ।

छबिगृहँ दीपसिखा जनु बरई ।।

दूसरी बार-

दीप सिखा सम जुबति तन मन जनि होसि पतंग ।

और तीसरा 'उत्तरकांड' के 'ज्ञानदीप' में। अब, एक दीया लो, उसमें दो वस्तु है; दाहकता भी है और प्रकाश भी है। काम दीपशिखा जैसा है; उसमें दाहकता भी है और प्रकाश भी है। हम किस पक्ष को लेते हैं उस पर हमारा पतन और उत्थान डीपेन्ड है। दाहकता ली तो गए! प्रकाश लिया तो राम तक गए। तुलसी काम से राम, राम से आराम, आराम से विश्राम, विश्राम से परम विश्राम और परम विश्राम से फिर राम तक गए; 'राम समान प्रभु नाहीं कहूं।' ये साईकल चली। जीवन का सत्य ये है। हम जैसों के जीवन में वात, पित्त, कफ शरीर के लिए जरूरी है; अतिरेक आदमी को बीमार कर देता है। सम्यक्ता बहुत आवश्यक है।

तो, जीवन का सत्य यही है। कोई पूर्ण निष्काम हो जाए तो उसकी महिमा तो वेद भी नहीं गा पाएगा। कोई पूरा भोगकर तृप्त हो जाए; मुबारक। लेकिन हम और आप की चर्चा है यहां। हमारे लिए सम्यक् होना आवश्यक है। इसलिए मैं प्रार्थना करूं, मन से कथा

सुनोगे तो रस मिलेगा, मनोरंजन भी मिलेगा; लेकिन केवल मन से ही मत सुनना, बुद्धि से सुनोगे तो विवेक प्राप्त होगा। काम के साथ कैसा विवेक, क्रोध के साथ कैसा विवेक; हमारे बच्चे उच्छृंखल न हो जाए इसलिए नकली क्रोध जीवन में कभी-कभी जरूरी है। थोड़ा डर आश्रित को विशेष स्वतंत्रता प्रदान करता है। इस संसार को चलाने के लिए काम आवश्यक है। अपनी पीढ़ी की सुरक्षा के लिए थोड़ा संग्रह जरूरी नहीं है? ईमानदारी से कहना। ज्यादा ठीक नहीं है। शरीर में वात, पित्त, कफ होना आवश्यक है। इसका अतिरेक आदमी को अस्वस्थ बनाता है।

तुलसीदासजी जीवन का सत्य बताते हैं कि काम हमारे शरीर का वात है, क्रोध पित्त है और लोभ कफ है; तीनों की जरूरत है। निष्कामपना औषधि होगी, कायमी उपाय नहीं है; कायमी उपाय है सम्यक्ता। इसलिए बुद्धि से सुनो, विवेक आएगा; मन से सुनो, रस आएगा; चित्त से सुनो, अंदर योग सधेगा। और अहंकार से सुनो, लेकिन पक्का अहंकार से सुनना। विश्व का पक्का अहंकार महादेव है। तो भी तुम कृतकृत्य हो जाओगे कि शंकर की गोद में बैठकर सुन रहे हो। काम से आगे-आगे यात्रा करते-करते राम मिल सकते हैं। रुके तो घाटा! कृष्ण काम को मार दे? कोई आदमी रस में डूबे तो कृष्ण नाराज नहीं होता लेकिन ये रस उसको अपाच्य न बन जाए उसका ध्यान रखते हैं। बाप बेटे को रोकता है कि फूटपाथ पर चल, इतना ट्राफिक है, इतना टी.वी.कल्चर चल रहा है। यद्यपि कोई गुरु भीतर से क्रोधी नहीं होता लेकिन कभी-कभी उनका क्रोध शिष्य के लिए मुक्ति होती है। प्रभु से प्रार्थना करो, कभी हमारा गुरु हमें डांटे! कोई ऐसा फ़कीर, कोई ऐसा बुद्धपुरुष; हमारे 'परवाज़' साहब कहते हैं-

शबभर रहा खयाल में तकिया फ़कीर का ।
दिनभर सुनाऊंगा तुम्हें किस्सा फ़कीर का ।

मुझे 'बाराबंकवी' साहब याद आ रहे हैं-

न हारा है इश्क न दुनिया थकी है,
दीया जल रहा है हवा चल रही है ।

तो, काम के बारे में उपयोग में वो ही आएगा जो हमारे जीवन का सत्य हो। उसी आधार पर कुछ सात्त्विक-तात्त्विक चर्चा हो रही है। फिर से एक बार स्मरण करे, दीप दाहक भी है, प्रकाशक भी है। दोनों में से हम क्या ले? हम विवेक का कैसे उपयोग करे उस पर आधारित बात है। तो, राम काम को मारते नहीं, लालन करते हैं। लेकिन सिखाते हैं कि मर्यादा में रहना। बेटा समझता नहीं; नादान है लेकिन माँ-बाप को कितनी चिंता होती है!

मुझे ऐसा गुरुकृपा से लगता है कि कामादि का जिसमें मद और दंभ न हो उसके वश परमात्मा है। हम जैसे हैं, वैसे हैं। तुलसीदासजी ने 'विनय' में लिख दिया-

तू दयालु, दीन हौं, तू दानि, हौं भिखारी ।
हौं प्रसिद्ध पातकी, तू पाप-पुंज-हारी ।।

तो, कुछ 'मानस' के आधार पर काम के बारे में तुलसीदासजी का जीवनसत्य क्या है उसकी हम आपस में चर्चा कर रहे थे। ये न कोई उपदेश है, न कोई आदेश है, केवल गोस्वामीजी का संदेश है। व्यासपीठ शासक की बोली नहीं बोल सकती; या तो मित्र की बोली में बात करती है या तो प्रेम की बोली में बात कर सकती है। ऐसे ही कथा को लिया जाए। इस रूप में हम कथा के मूल तत्त्व को समझें। राम और काम में यदि आप कुछ फ़र्क भी देखना चाहे तो देख सकते हैं। एक बाप है, एक बेटा है; एक चेतना है, एक परमचेतना है; एक थोड़ा आराम, विश्राम है लेकिन एक परमविश्राम है। लेकिन कुछ-कुछ सूत्र मेरी समझ में आते हैं कि जो राम में है वो काम में, बेटे में भी है। राम यानी कोई बुद्धपुरुष।

मेरे पास कई जिज्ञासाएं आती है कि ये 'बुद्धपुरुष' कौन? मेरे भाई-बहन, ऐसा आप किसी के बारे में जान सके; एक बात और समझ लो कि जाने बिना भरोसा नहीं होता। आप किसी के बारे में किसी के द्वारा सुनकर ही निर्णय करोगे तो रह जाओगे। जरा जानो, परखो, निकट आओ। कई लोग कहते हैं, बापू को मिलना मुश्किल है, बापू के कई लोग क्लोज़ है। मेरे कोई क्लोज़ नहीं है; सब के क्लोज़-अप मेरे पास है! न मेरे कोई नजदीक है, न मैं किसी से दूर हूं।

कोई पूरा-पूरा मान ले तो जानने की भी जरूरत नहीं; लेकिन जब पूरा मान लिया न जाए तब तक जानना जरूरी है। 'जाने बिनु न होइ परतीती।' जब तक जानोगे नहीं तब तक भरोसा नहीं होगा। किसी के कहने पर निर्णय मत करना। खुद चलो, अनुभव करो। 'बिनु परतीति होइ नहीं प्रीती।' भरोसा होने के बाद प्रेम होता है। और 'प्रीति बिना नहिं भगति दिढ़ाई।' प्रीति के बिना भक्ति दृढ़ नहीं होती। ये क्रम 'मानस' का है।

युवान भाई-बहन, कैसे परखे ऐसे परमतत्त्व को? छः बस्तु है; यद्यपि परखनेवाला भी आख़िर में कहता है कि मार खा गया, पूरा परखा नहीं गया! एक, जिसमें औदार्य हो, आश्रय उसका करो। तुम्हारी आत्मा कहे कि ये उदार बहुत है, यहां संकीर्णता की कोई गुंजाईश नहीं; यहां नात-जात की कोई गुंजाईश नहीं; केवल भाव का साम्राज्य। क्यों राम भगवान है? मेरे तुलसी कहते हैं 'विनय' में-

ऐसो को उदार जग माहीं।
बिनु सेवा जो द्रवै दीन पर राम सरिस कोउ नाहीं।।

ऐसो को उदार? जिसमें औदार्य हो उसका आश्रय करना। दूसरा, जिसमें सौंदर्य हो। उदारता की एक सुंदरता होती है। सौंदर्य मानी?

लाजहिं तन सोभा निरखी कोटि कोटि सत काम।

ज़िगर 'मुरादाबादी' की गज़ल-

अच्छा भी बहुत है, प्यारा भी बहुत है।
ये सच है कि तूने मुझे चाहा भी बहुत है।

तीसरा लक्षण, माधुर्य। कटु बोल न सुनो कभी उसके पास से; माधुर्य; अमृतवचन। औदार्य हो, सौंदर्य हो, माधुर्य हो लेकिन ये सब अहंकार ला सकते हैं; इसलिए चौथा, गांभीर्य हो। ये बुद्धपुरुष के लक्षण है। पांचवां, धैर्य। कुछ भी हो, कभी धीरज न खोए। 'होइहि सोइ जो राम रचि राखा।' 'उपनिषद्' में आता है, 'धैर्यकंथा।' बहुत कठिन है, भजनबल न हो तो। और ये सब होते हुए, शौर्य भी हो; भीतरी अभय हो। 'किसी की परवाह नहीं', ऐसा अभिमान न हो लेकिन स्वभाव हो। ऐसा कोई मिले तो विवेक से निर्णय करना। जिसके जीवन में केवल विचार और दर्शन न हो लेकिन जीवन का सत्य उभरता हो।

अब कथा का थोड़ा क्रम ले लूं। कल तक हमने देखा कि शिव के संकल्प द्वारा त्यजी गई सती सत्तासी हजार साल के बाद शिव समाधि से बाहर आते हैं और वो सन्मुख आई। शिव ने आसन दिया। दक्ष प्रजापति की बात आई। प्रजापतिनायक का पद मिलने के कारण उसने एक यज्ञ आयोजित किया। यज्ञ में सभी देवताओं को बुलाया लेकिन शंकर, विष्णु और ब्रह्मा को न बुलाया। याद रखें, कोई भी सत्कर्म बदला लेने के लिए न किया जाए, बलिदान देने के लिए किया जाए। सती को भी आमंत्रण नहीं है। फिर भी सती ने जिद्द पकड़ी है यज्ञ में जाने की। शिवजी ने विवेक से समझाया। शिव सती को सन्मानपूर्वक विदा देते हैं। दक्ष ने बेटी का भी अपमान किया! समय बदले तो अपने भी परायें हो जाते हैं! पूरे परिवार में सती को कोई आदर नहीं दे रहा! एक माता प्यार से मिली, क्योंकि माँ, माँ होती है।

यज्ञ में भगवान शंकर का कहीं स्थापन नहीं देखा और सती आक्रोश में आकर योगाग्नि में अपने देह

राम के अनेक रूप है वैसे काम के भी अनेक रूप है

मैंने कल कहा कि अपने जीवन के सत्य के संदर्भ में हम काम का दर्शन करें। व्याख्या भले कुछ भी हो लेकिन इन्हीं सूत्रों का हमारे जीवन के सत्य के साथ कहां-कहां तालमेल है ये ज्यादा जरूरी है। कभी-कभी जो आदमी इतना सिखाता है वो भी जीवन के सत्य से अनभिज्ञ होने के कारण घाटे का सौदा कर लेता है! मैंने एक जैन मुनि से सुना था कभी कि एक आदमी सरकस में जोकर का काम कर रहा था; हंसाता था सब को; सब को लगे कि ये आदमी कितना खुश है! वो एक दिन बाज़ार में एक पुस्तकालय के पास गया और कहा कि 'मुझे आत्महत्या करने की कोई किताब दो।' तो वेपारी ने कहा कि 'क्यों मरना चाहते हो?' वो नहीं जानता था कि ये जोकर है। बोले, 'आप ऐसा करे कि गांव में एक सरकस आया है और वहां एक जोकर सब को हंसाता है, खुश करता है, जीने का उत्साह देता है, आप वहां जाओ।' तो वो बोला, 'वो जोकर ही मैं हूं!'

दूसरे को देता है बहुत लेकिन जीवन का सत्य कहीं छूट गया है! इसलिए मैंने कल कहा कि काम के बारे में चिंतन हो, विचार हो, दर्शन हो लेकिन जीवन का सत्य तब बने; 'महाभारत' का संदर्भ लूं तो 'महाभारत' में भगवान कृष्ण की एक दिनचर्या बताई है व्यासजी ने। इसकी भूमिका ये कामवाली बात के लिए जरूरी है। प्रश्न पूछा गया कि 'भगवान कृष्ण की दिनचर्या क्या है?' वहां भूमिका में आता है कि आदमी बहुत भोग भोगता है तब एक संभावना बन जाती है रोगी होने की। 'भोगे रोग भयम्।' जैसे कल चर्चा हुई कि आज के कुछ चिंतकों ने कहा कि पूरा-पूरा भोग लो तो काम खतम हो जाएगा लेकिन ये जीवन का सत्य नहीं है, ये जीव का सत्य है। हमारे यहां तो, हमारे जीवन में तो जितना भोगो इतनी आग भडकती है, 'विषयभोग जिमि घी ते', ये तो घी डाला जाता है। हां, अग्नि यदि कम है और उस पर आप एक डिब्बा घी डाल दो, वर्षा कर दो, तो अग्नि कम हो जाएगी या बुझ जाएगी। काम की मात्रा बहुत कम हो व्यक्ति के जीवन में तो, स्नेह मानी घी, स्नेह की बड़ी मात्रा में उस पर वर्षा कर दी जाए तो अग्नि शांत हो सकती है; जो निष्काम होने का एक तरीका हमारे ग्रंथों में माना गया है, बाकी तो अग्नि भड़कती ही है। इसलिए बुद्ध की बात हो रही है कि सम्यक् बने। और सब की सम्यक्ता भिन्न-भिन्न होती है। हमनें भी देखा है कि देहातों में उस समय लोज चलती थी उसमें आधा भाणा, पूरा भाणा मिलता था। कभी-कभी आदमी को खाना ज्यादा है लेकिन भूख होने पर भी साधन के अभाव के कारण वो आधा भाणा खाता है; वहां सम्यक्ता नहीं है। और एक सम्पन्न आदमी पूरी थाली मंगवाता है, लेकिन खाने की क्षमता कम है तो दो ही रोटी ख़ा सकता है! तो ये दोनों की सम्यक्ता कैसे निर्मित करे? एक आदमी को भोग बहुत भोगना है लेकिन क्षमता नहीं है। एक तो क्षमता नहीं है; दूसरा, समय का मौका नहीं है-

को जलाकर भस्म कर देती है। हाहाकार हो गया! दक्ष की दुर्गति। यज्ञ असफल रहा। सती ने जलते समय शिव को ही जनम-जनम मांगा। इसी कारण वो हिमालय के घर कन्या के रूप में प्रगट हुई है। बेटी घर में जन्म ले तो दुगुना उत्सव करना। हिमालय उत्सव करता है। साधुसंतों की कतारें आने लगी। नारदजी आते हैं। नारदजी बेटी का नामकरण करते हैं,'नाम उमा अंबिका भवानी।' भविष्य कथते हुए नारदजी कहते हैं, ''तुम्हारी बेटी दुनिया में पातिव्रत्यधर्म की आचार्य बनेगी। आप की पुत्री का वर अगुन होगा; उसको कोई मान की परवाह नहीं होगी; माँ-बाप नहीं होंगे; उदासीन होगा, संशय नहीं होगा उसे; जोगी होगा, जटाजूट होगा, निष्काम होगा, नग्न रहता होगा, अमंगल वेश रखता होगा; ऐसा पति आप की बेटी को मिलेगा।'' माता-पिता बहुत दु:खी हो गए! लेकिन पार्वती मन में मुस्कुराई कि जिस वर का वर्णन भगवान नारद ने किया है वो भोलेनाथ के सिवा कोई नहीं हो सकता। पार्वती उग्र तप करती है। आकाशवाणी हुई कि शंकर तुम्हें मिलेंगे। इधर शंकरजी घूमते रहे। ध्यान में बैठे थे तब भगवान रामभद्र प्रगट हुए और शिवजी को पार्वती से ब्याह करने का आदेश दिया। फिर समाधि से मुक्त करके ब्याह करवाने के लिए देवताओं ने योजना बनाई।

यहां भगवान शंकर की बारात की तैयारी सब ने शुरू की। महादेव नंदी पर सवार होते हैं। महादेव का रूप देखकर बेहोश हो गई माँ मैना को बेटी समझा रही है कि दु:ख-सुख जो मेरे भाग में लिखा है वो मैं जहां जाऊंगी, पाऊंगी। भारत की कन्या का पार्वती प्रतिनिधित्व करती है। भारत की कन्या कहीं भी ससुराल में जाती है, नसीब पर छोड़ देती है लेकिन उसके सामने इसके सांस-ससुर का कर्तव्य बनता है कि आई हुई भाग्यवादी कुलवधू को कष्ट न दे।

नारदजी आए। माँ मैना को नारदजी समझाते हैं कि ये जगतजननी है, तू भाग्यवान है। आदमी के घर में शक्ति हो, घर के द्वार पर शिव आया हो, लेकिन नारद जैसा कोई बुद्धपुरुष हमारी आंख न खोले तब तक गैरसमझ बनी रहती है। फिर तो अलौकिक रूप में शिवजी दिखते हैं। नगाधिराज हिमालय ने अपनी बेटी शिव को समर्पित की। बिदा की बेला आई। कैलास पहुंचे। शंकर और पार्वती का अद्‌भुत विहार। कार्तिकस्वामी का जन्म हुआ; पुरुषार्थ का जन्म होता है। ताड़कासुर नामक राक्षस को उसने मारा। जगत के कल्याण के लिए शिव ने ये उपकारक काम किया। और उसके बाद एक बार शिवजी कैलास के वटवृक्ष के नीचे बिराजित होते हैं, पार्वती जिज्ञासा करती है; उसकी कथा कल।

एक दीया लो, उसमें दो वस्तु है; दाहकता भी है और प्रकाश भी है। काम दीपशिखा जैसा है; उसमें दाहकता भी है और प्रकाश भी है। हम किस पक्ष को लेते हैं उस पर हमारा पतन और उत्थान डीपेन्ड है। दाहकता ली तो गए! प्रकाश लिया तो राम तक गए। तुलसी काम से राम, राम से आराम, आराम से विश्राम, विश्राम से परमविश्राम और परमविश्राम से फिर राम तक गए; 'राम समान प्रभु नाहीं कहूं।' ये साईकल चली। जीवन का सत्य ये है। हम जैसों के जीवन में वात, पित्त, कफ शरीर के लिए जरूरी है; अतिरेक आदमी को बीमार कर देता है। सम्यक्ता बहुत आवश्यक है।

बिनु अवसर भय तें रह जोई ।
जानेहु अधम नारि जग सोई ।।

भोगना है लेकिन अवसर नहीं है। ये खा तो लेता है आधा भाणा लेकिन उसकी सम्यक्ता उसमें नहीं, उसको खाना है पूरा। और कुछ लोग पूरे सम्पन्न है, पूरे भाणे पर बैठे हैं लेकिन बेचारे खा नहीं सकते!

मुझे पूछा गया कि सम्यक्ता का मतलब क्या? मेरे भाई-बहन, सब की सम्यक्ता निजी होती है। एक आदमी पचास गुलाबजांबु खा जाए, आनंदित हो जाए और एक आदमी पांच ही खाता है और आनंदित हो जाता है। और एक आदमी गुलाबजांबु खाए तो पेट बिगड़ता है। कोई आदमी दो-तीन घंटे सोए तो भी चौबीस घंटों की पूर्ण ऊर्जा प्राप्त कर लेता हैं। सम्यक्ता अपनी-अपनी होती है।

तो, अतिशय भोग आदमी को रोगी बनाता है। अब भोग के द्वारा आया रोग, इस रोग का शमन कैसे हो? तो हमारे यहां एक अद्‌भुत उपाय आया कि योग आया। संयम, नियम, आसन, पतंजलि का अष्टांग योग। जो शरीर के रोग और मन के रोग-दोनों की औषधि और उपाय है। इसी योग में एक स्थान है, ध्यान। और 'महाभारत'कार कहते हैं, श्रीकृष्ण अपना सुबह का नित्यकर्म ध्यान से करते हैं। पहला कार्य कृष्ण का ध्यान है। आदमी ध्यान करता है तो समझना अगल-बगल में सतजुग परिकम्मा करता है। ध्यान की एक बड़ी महिमा है। तो, ये भगवान कृष्ण की दिनचर्या का क्रम है। सुबह में भगवान कृष्ण ध्यान करते हैं। ध्यान अभ्यंतर स्नान है। उसके बाद भगवान कृष्ण स्नान करते हैं। स्नान करने के बाद भगवान कृष्ण जो तीसरा नित्यकर्म करते हैं वो है गूढ़मंत्र का जप। अब, अभ्यासु लोग इस पर लगे हैं कि ये गूढ़मंत्र क्या है? कौन-सा मंत्र वो जप रहे हैं? कोई कहते हैं कि वो मंत्र था 'अहम् ब्रह्मास्मि।' कोई प्रेममार्ग के पथिक ने कहा कि वो मंत्र था 'राधे।' एक ने कहा कि उसे अर्जुन इष्ट है, तो अर्जुन को ही वो स्मरते हैं। किसी ने कहा, 'ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।' अब, सब अपनी-अपनी बात करेंगे! गूढ़मंत्र यदि कहने की बात होती, तो उसके आगे 'गूढ़' शब्द का प्रयोग किया ही न जाता!

गूढ़मंत्र के जप के बाद व्यासजी कहते हैं, ब्राह्मणों का पूजन होता था। वेदविद् ब्राह्मण आते थे, कृष्ण पूजा करते हैं। और उसके आगे जो क्रम था उसमें लिखा है, स्वस्तिवाचन होता था। ब्राह्मणदेवता स्वस्तिवाचन करते थे। उसके बाद अग्निहोत्र यज्ञ करते थे। भगवान स्वयं यज्ञ करते थे। उसके बाद तैयार होकर भगवान अपने कार्य में निकलते थे। जो मंगल है उसको स्पर्श करते थे। मंगलस्पर्श मिन्स घर में गाय हो तो गाय को छू लेना मंगलस्पर्श है; दीपक जलता हो तो दीपक का आदर कर लेना; घर में कोई सात्त्विक धूप ले लेना; शास्त्र हो उसे स्पर्श करना-ये मंगलस्पर्श है। सोने का स्पर्श भी मंगलमय है। सोना न हो तो घर में एक बालक कोई तोतला वाक्य बोले और वो सुन लो वो सोने का स्पर्श है। तुलसी का स्पर्श भी मंगलस्पर्श माना है; अथवा घर में कोई छोटा बच्चा हो और आप का नित्यकर्म पूरा हुआ और आप को दफ्तर जाना है उसी समय एक निर्दोष बालक आप के पास आए, उसी समय उसके सिर पर हाथ रखकर उसके सिर को सूंघना मंगलस्पर्श है। अपने इष्ट वाद्यों को स्पर्श करना मंगलस्पर्श है। तुम्हारे गुरु ने पादुका या बेरख़ा दिया हो, तो गुरु ने दी हुई कोई प्रासादिक वस्तु का स्पर्श मंगलस्पर्श है। गोरस को स्पर्श करना मंगलस्पर्श है। साधु-फ़कीर के भिक्षापात्र का स्पर्श मंगलस्पर्श माना जाता है। ये सब कितना सरल पड़ता है! यदि इस तरह आप की आत्मा तक ये बात पहुंचे तो, संयोग बने तो ऐसा करना श्रद्धा से; अच्छा लगेगा। फल की चिंता मत करना; मन प्रसन्न रहेगा। फिर तो कृष्ण की सभी दिनचर्या लिखी है। उसका कार्य तो कितना वैश्विक था! फिर वो बच्चों के साथ बैठते थे। ये सीखना; आदमी ज्ञानी हो कर गंभीर बन गया बहुत! आज की सदी को चाहिए मुस्कुराता हुआ धर्मगुरु; ये जरूरी है।

मुस्कुराते रहो, गुनगुनाते रहो।
जीवन संगीत है, स्वर सजाते रहो।

स्वाभाविक मुस्कुराहट अस्तित्वरूपी परमात्मा को फूल चढ़ाने की विधि है। आदमी हंसता रहे, बहुत बड़ा फायदा है। मेरी कोशिश है कि मेरा श्रोता हंसे। बाप! मुस्कुराहट प्रसन्नतारूपी पौंधे का पुष्प है और परमात्मा को यही चढ़ाया जाता है। मैं कह रहा हूं कि अतिरेक विकृति पैदा करता है; विकृति से रोग पैदा होता है और फिर रोग का शमन करना है तो फिर योग में जाना होगा। योग औषधि भी है और उपाय भी है।

'रामचरित मानस' में काम का दर्शन अपने ढ़ंग से पेश करते हुए गोस्वामीजी बहुत बड़ी जीवनसत्यमूलक बातें लिख देते हैं, इसकी खुले दिल से, संवादीरूप में चर्चा हो रही है। भारतीयों की स्वयंमर्यादा जो होती है; जैसे कर्ण पैदा हुआ तो कवच-कुंडल लेकर पैदा हुआ, हम भारतीय लोग पैदा होते हैं तो अपनी कुछ शील, लज्जा, मर्यादा कवच-कुंडल की तरह लेकर माँ की कूख से आते हैं। लज्जा हमें सिखानी नहीं पड़ती। अपवाद हो सकता है! आज का जो कचरा डाला जा रहा है लोकमानस पर उसका परिणाम तो क्या आएगा ख़बर नहीं! ये जो हो रहा है उसको रोकना मुश्किल है; लेकिन बच्चों को संभाले। ऐसे चित्र देखकर पांच-पांच साल के बच्चे भी कुछ न सोहे ऐसी चेष्टाएं करने लगे हैं! अभी शायद वो निर्दोषता के कारण लेकिन जब उसको ये चेष्टाएं अच्छी लगने लगेगी तब? रावण के काल में ऐसी घटना बनी थी कि पूरा संसार भ्रष्टाचार से भर गया था! भ्रष्टाचार एक ही प्रकार का नहीं होता।

काम की चर्चा चल रही है तब काम मानी केवल जिसको हम काम कहते हैं इतनी ही चर्चा सीमित न करो कि जिसमें हम एक पुरुषविग्रह है, एक स्त्रीविग्रह है। काम का अर्थ इतना संकीर्ण नहीं है, काम का क्षेत्र बहुत विशाल है। हमारी भारतीय विधि अनुसार किसी की शादी होती है तो दुल्हा और दुल्हन को लक्ष्मी-नारायण माना जाता है। हरेक शुभ प्रसंग के एक विशिष्ट देवता होते हैं। और हमारे ग्रंथों का निर्णय है, शादी में दुल्हा-दुल्हन लक्ष्मी-नारायण है और विवाह विधि के देवता काम है। उसको नकारा न जाए। काम को केवल एक अर्थ में न लिया जाए। जहां-जहां हमारी विधविध क्षेत्र में भटकती हुई कामनाएं, अमर्याद कामनाएं है, सब काम का ही परिवार है। कभी-कभी तो मुझे लगता है कि काम के बारे में जो वस्तु केन्द्र में रखी जाती है वो काम तो एक चैतन्य भी प्रगट कर सकता है और कामनाएं तो बिलकुल जड़ है।

भगवान शिव और पार्वती का विवाह हुआ उसके पहले काम को जला दिया था लेकिन फिर काम को स्थापित कर दिया क्योंकि ब्याह करना था, आसुरीवृत्तिओं का नाश करना था, इसके लिए एक ऐसी चेतना को प्रगट करना था। तो, वहां काम है और फिर शिव-पार्वती की शादी के बाद इस सत्य को तुलसी ने नकारा नहीं है; मुझे कहना ये है। तुलसी ने लिख दिया-

हर गिरिजा कर भयउ बिबाहू ।
सकल भुवन भरि रहा उछाहू ।।

पार्वती और गिरिजा का नितनूतन विहार; उसमें समग्र कामक्रीडा आ गई; खुलासा करने की जरूरत नहीं है। कालिदास ने 'कुमारसंभव' में खुलासा कर दिया है लेकिन तुलसी, तुलसी है। राम-लक्ष्मण मिथिला में गये तो वहां भी स्त्रियां है; वहां की स्त्रीओं ने राम कैसा दिखा?

तुलसी ने इतना ही लिखा, 'निज निज रुचि अनुरूप।' ये जीवन का सत्य है। सब स्त्रीओं ने अपनी-अपनी रुचि के अनुसार राम का दर्शन किया। कहना है लेकिन कहीं मर्यादा भंग न हो जाए और सत्य समझा जाए। एक और संकेत मैं करूं। जानकीजी जब तैयार होती है; मथुरा की महिलाओं की मानसिकता और मिथिला की महिलाओं की मानसिकता में इतना अंतर हो गया है। जानकीजी ने साड़ी पहनी है और कुमारी जानकी अत्यंत सुंदरता को भी सुंदर करनेवाली ये माँ जानकी है। उसने साड़ी पहनी है। लेकिन साहब, वो साड़ी बहुत पतली है। मैं प्रमाण के साथ कहूं आप के सामने, एक चोपाई है वहां-

सोह नवल तनु सुंदर सारी।
जगत जननि अतुलित छबि भारी ।।

'नवल तन' मानी ये जो ऊम्र होती है जुवानी की, कौमार्य की, एक ऐसा नवल शरीर है माँ जानकी का कि जिसमें और कोई कामसूत्र लगाने की जरूरत नहीं है; पराकाष्ठा है। ऐसा नवल तन, सुंदर साड़ी पहनी है। अरे, साड़ी पहनी है तो अंदर नवल तन है, ये कवि ने देखा है? तभी तो कहता है, 'नवल तन।' लेकिन आधी पंक्ति में साधुता उभर आती है, 'जगत जननि अतुलित छबि भारी।' तुलसी को ये माँ का शरीर कैसा लगा? जैसे माँ बैठी है, बच्चे को माँ का पेट दिखाई दे साड़ी में से और बच्चा अपनी माँ की साड़ी के पास जाकर माँ का पेट देखने लगे, ऐसे मातृभाव से एक बच्चा बनकर तुलसीजी ने ये केवल मेरी माँ नहीं है, जगत की माँ है ऐसे भाव से दर्शन किया है। वहां काम का भी सन्मान हो जाता है। 'बालकांड' में शंकर-पार्वती का नितनूतन विहार जो लिखा है, वहां शिव-पार्वती ने काम का सन्मान किया है। लेकिन काम हर जगह 'रामायण' में सन्माननीय नहीं है। 'अयोध्याकांड' में दशरथ जब काम के वश होकर मज़बूर हो जाते हैं कैकेयी के सामने वहां काम लज्जित हो जाता है! एक मज़बूरी के कारण दशरथ जैसा उम्रलायक आदमी, जिसके बाल सफेद हो चुके हैं, चार-चार पुत्र ब्याह चुके हैं और वो; तुलसीजी का छंद ले लो, वहां सीधा काम का वर्णन है-

केहि हेतु रानि रिसानि परसत पानि पतिहि नेवारई।
मानहुँ सरोष भुअंग भामिनि बिषम भाँति निहारई ।।

तो, दशरथजी कामवश है, मज़बूर हो गए है, कैकेयी उसे धक्का दे रही है! ये सब 'मानस' में चित्र अंकित है। तो, शंकर और उमा के विहार में काम सन्मानित है, दशरथ को काम मज़बूर कर रहा है वहां काम लज्जित है। राम के अनेक रूप है वैसे काम के भी अनेक रूप है। वो सर्जन भी करता है और शूर्पणखा के प्रसंग में काम पूरे कुल के सर्वनाश का कारण बना। 'किष्किन्धाकांड' में वर्षा होती है तो लगता है कि प्रभु के विरह में गरमागरम तेल बरस रहा है! वहां कामदेव सताने का धंधा कर रहा है। और 'सुन्दरकांड' में काम सहायक बनता है; कैसे? 'बन बाग उपबन बाटिका' शोभा दे रहा है, आनेवाले का स्वागत करता है। 'लंकाकांड' में रावण को महारस तरफ जाने में सहायक हो रहा है; रावण काम को भी सहायक बनाता है। और 'उत्तरकांड', भुशुंडिजी के शरण में आकर काम शांत हो जाता है। काम के कई रूप है। इसी रूप में किस रूप के साथ हमारा पाला पड़े उस रूप में उसे देखे। प्रत्येक व्यक्ति का ये स्वतंत्र अनुभव बने।

एक जिज्ञासा भी है, 'दमन को भजन समझनेवालों का पतन हो जाता है?' दमन अच्छा नहीं है, ये मैं भी कुबूल करता हूं। और केवल दमन को भजन मत कहो। 'भजन' बहुत प्यारा शब्द है। तुम खाओ ही न वो दमन है; भजन भोजन करने को मना नहीं करता। दमन कुछ मेहनत का काम है। दमन की प्रक्रिया से प्राकृतिक, स्वाभाविक परिणाम आना मुश्किल है; विकृत परिणाम आता है। कोई जितेन्द्रिय महापुरुष अपवाद है; हम जैसों की बात करो। बालक को स्कूल में कहा जाता है कि आंखें बंद करो और बैठो प्रार्थना के वक्त, तो दो ही मिनट में आंखें खूलती है! दमन भजन है ही नहीं; दमन साधना हो सकती है। भजन का प्रदेश बिलग है। तो, दमन भजन नहीं है, साधना हो सकती है; कुछ कठिन तपस्या हो सकती है। लेकिन उसको भजन का नाम मत दो। भजन क्या है? तुम लाख तप करो लेकिन जो तप नहीं करता उसकी निंदा करो तो तुम भजन नहीं कर रहे हो। हमारी कनकेश्वरी माँ गाती रहती है-

समता का अंजन आंज ले तो हो गया भजन,
आदत बुरी सुधार ले तो हो गया भजन;

सात्त्विकता से किया जाए तो ये बजाना और गाना भजन है। सात्त्विकता बरकरार रहे। कोई धर्म ऐसा आदेश दे कि 'एन्जोय नहीं करना', तो ये दमन है। दमन विकृति पैदा करता है। और मन का स्वभाव जहां जाने को मना करो वहीं पहले जाता है!

ओशो का एक विधान किसी ने भेजा है, 'पेड़ को जितना ऊंचा उठना हो तो उसे अपनी झड़ें उतनी ही

नीचे ले जानी पड़ती है।' ये बिलकुल सीधा है। देहात के किसान से पूछो, पेड़ जितना ऊंचा जाए उनकी झड़ें उतनी नीची जानी चाहिए। लेकिन एक बात और समझ लो, ये भी पूर्ण सत्य नहीं है। ताड़ का वृक्ष जितना ऊंचा जाता है, इतनी झड़ ऊंचाई नापतोल के अनुसार जमीन में नहीं होती। झड़ें मजबूत होनी पर्याप्त है। ये दर्शन अधूरा है। कभी-कभी क्या है कि जहां हमारी एक प्रकार की आसक्ति हो जाती है तो हम मान लेते हैं कि उसने कहा वो सत्य ही सत्य। आदमी को अपना चित्त भी मुक्त रखना चाहिए। झड़ें मजबूत हो तभी ऊंचाई बरकरार है। जिनका बुद्धपुरुष मजबूत होगा उनका आश्रित गगन को चूमता होगा। और मूल की बात छोड़ो, बीज तो इससे भी छोटा होता है। वृक्ष भव्य होता है, बीज दिव्य होता है। और हम भारतीयों ने भव्यता का सन्मान किया है लेकिन दिव्यता को प्रणाम किया है।

अन्य एक जिज्ञासा, 'कामदेव का प्रभाव इतना प्रबल क्यों है?' देश का सद्भाग्य है कि हमारे वर्तमान प्रधानमंत्री है उसको कोई बेटा नहीं है! वर्ना दुनिया की सियासतों में देखो, जो वडाप्रधान होता है ना, उसके बेटे का प्रभाव ज्यादा होता है! तो, एक सियासत के क्षेत्र में; कोई धनवान हो तो उनके बेटे का भी बहुत चलता है; कोई प्रख्यात नामवाले का कोई बेटा हो तो भी नाम से काम चलता है, कामदेव का काम चलता है क्योंकि उसका बाप राम है; ये कृष्ण का बेटा है, इसलिए उसका प्रभाव है। मैंने ये भी कहा है कि प्रभाव केवल मत समझो, अंतरंग जाकर काम का स्वभाव समझो। काम परोपकारी है, काम जगत के सर्जनबिंदुओं में से एक है।

'क्या बाप की सीट पुत्र ले सकता है?' ले सकता है लेकिन बाप गादी ख़ाली करे तो! राम सनेही नहीं मरता तो राम कब मरता? यहां गादी की कोई बात नहीं है, यहां अस्तित्व ने सोंपा हुआ प्राकृतिक कर्तव्य का केवल निर्वहण हो रहा है।

'दुनिया से छुटकारा कैसे पाए?' छूटकारा की चिन्ता क्यों करते हैं आप? औरों की हत्या करना वो भी पाप है और आत्महत्या करना वो महापाप है। मालिक ने दिया है उस जीवन को फूंक न डालो; छूटकारा की छोड़ो। 'जेहि बांध्यो सोई छोरे।' जेणे बांध्यो छे ए ज छोडशे। छूटकारा क्या? हरि भजो; प्यार से जीओ। कथा निराश नहीं बनाती, कथा सुनकर आप घर जाओ ना तो घरवालों को लगना चाहिए कि फोटो ले लूं! छूटकारे की बात छोड़ो। वैसे भी मैं मुक्तिमार्गी नहीं हूं। हमें तो यहां बार-बार जनम लेना है। तो, मेरे भाई-बहन-

सिद्ध बिरक्त महामुनि जोगी।
तेपि कामबस भए बियोगी ।।

तो, सब समय भूलकर काम के प्रभाव में आ गए। गोस्वामीजी कहते हैं,सिद्ध,बिरक्त, महामुनि, जोगी, बड़े भी कामवश हुए! ये बड़े-बड़े नाम लिखे हमें सावधान करने के लिए; इसलिए जरा सम्यक् रहा जाए। अग्नि प्रकाशक भी है और दाहक भी है। तुलसीदासजी ने कामदेव को अग्नि कहा है; काम अग्नि है, 'काम कृसानु बढ़ावनिहारी।' मंद-सुगंध-शीतल वायु जो बहती है वो कामरूपी अग्नि को बढ़ाती है। विषय के सुख घी है। घी अग्नि में गिरते ही अग्नि ज्यादा बढ़ता है। तो, काम अग्नि है; अग्नि में जलना है कि अग्नि से प्रकाश पाना है ये विवेक बुद्धिपूर्वक कथा सुनने से आएगा। वो ही अग्नि पका सकता है, वो ही अग्नि का अतिरेक हो जाए तो रसोईघर पूरा जल जाता है!

दूसरा, कामदेव के बारे में तुलसीदासजी ने लिखा है, काम भुजंग है। वो जिसको डंसता है; हमारे यहां आप जानते हैं कि सांप किसी को डंसता है तो देहातों में तो पहले औषधि की व्यवस्था नहीं थी, तो श्रद्धा से गांव में कोई सांप उतारनेवाले होते थे वहां जाते थे; अब रात में कोई झेरी जीव ने डंस लिया है लेकिन ये

सांप है कि नहीं वो निश्चित नहीं है तो फिर अंदाज है कि सांप ने कांटा है तो उसको नीम के पत्तें ख़िलाए जाते हैं। नीम के पत्तें कड़वे होते हैं और नीम के पत्तें खाते-खाते जिसको सांप ने डंसा है वो आनंद से खाए और उसको मीठा लगे, कटु पत्तें मीठे लगने लगे, समझना सांप ने कांटा है। जुवार उसको ख़िलाए तो वो उसको कटु लगे, जुवार के दाने मीठे हैं, लेकिन सर्पदंश जिसको हुआ उसको कड़वे लगते हैं; ये परीक्षण था। तुलसीदासजी वो देहाती दृष्टांत यहां लाते हैं कि 'काम भुजंग डसत जिन जाहि।'-'विनयपत्रिका।' कामरूपी सर्प जिसको डंसता है उसको विषयभोग का नीम का पत्ता कटु नहीं लगता है। तो, काम अग्नि है, काम भुजंग है, कई रूप में काम को प्रस्तुत किया है। काम की पूरी सेना का वर्णन 'अरण्यकांड' में 'देखहु तात वसंत सुहावा' करके काम का पूरा लश्कर आता है।

तो, मेरे भाई-बहन! 'मानस' के आधार कुछ 'कामदर्शन' की चर्चा हम कर रहे हैं। थोड़ा कथा का क्रम आगे ले लूं। भगवान शंकर का ब्याह हुआ। योग्य अवसर पाकर पार्वती शिवजी के पास आती है। अपनी प्रिया को भगवान महादेव ने आदर दिया; वामभाग पर आसन दिया। भगवान की प्रसन्नता देखकर पार्वती ने कहा, 'प्रभु, मेरे मन का संदेह नहीं गया। मेरी समझ में रामतत्त्व नहीं आ रहा है। मैं प्रार्थना करती हूं कि आप मुझे रामकथा के द्वारा मेरे संदेह का नाश करो।'

महादेव ध्यानरस में डूबे थे। बाहर आए; और हर्षित होकर भगवान के चरित्र को गाने के लिए प्रसन्नता से आगे बढ़े। और कैलास की ज्ञानपीठ से शिवजी जो पहली चोपाई बोले वो तुलसीजी ने लिख ली-

धन्य धन्य गिरिराजकुमारी।
तुम्ह समान नहिं कोउ उपकारी ।।
पूँछेहु रघुपति कथा प्रसंगा।
सकल लोक जग पावनि गंगा ।।

'हे हिमाचलपुत्री, आप धन्य है। आप ने ऐसी कथा पूछी जो सकल लोक का हित करनेवाली है। आप परोपकारी है।' मैं हरवक्त कहता हूं, कहीं भी, कभी भी भगवान की कथा का आयोजन हो उसमें जो केवल विनम्रतापूर्वक निमित्त बन जाते हैं वो सदैव 'मानस' के आधार पर धन्यवाद के पात्र बन जाते हैं। रामकथा का आरंभ भगवान शिव कैलास की विश्वासपीठ से कर रहे हैं; पार्वती श्रोता है और उससे विश्व को मिलेगी रामकथा। शिव और पार्वती के कामविहार से विश्व को पुरुषार्थ मिला और शिव और पार्वती का अब रामविहार शुरू हो रहा है, उनसे मिली विश्व को एक अद्भुत कन्या, रामकथा।

काम मानी केवल जिसको हम काम कहते हैं इतनी ही चर्चा सीमित न करो कि जिसमें हम एक पुरुषविग्रह है, एक स्त्रीविग्रह है। काम का अर्थ इतना संकीर्ण नहीं है, काम का क्षेत्र बहुत विशाल है। काम को केवल एक अर्थ में न लिया जाए। जहां-जहां हमारी विधविध क्षेत्र में भटकती हुई कामनाएं, अमर्याद कामनाएं है, सब काम का ही परिवार है। कभी-कभी तो मुझे लगता है कि काम के बारे में जो वस्तु केन्द्र में रखी जाती है वो काम तो एक चैतन्य भी प्रगट कर सकता है और कामनाएं तो बिलकुल जड़ है।

कथा-दर्शन

- आज की सदी को चाहिए मुस्कुराता हुआ धर्मगुरु।
- स्वाभाविक मुस्कुराहट अस्तित्वरूपी परमात्मा को फूल चढ़ाने की विधि है।
- मुस्कुराहट प्रसन्नतारूपी पौंधे का पुष्प है और परमात्मा को यही चढ़ाया जाता है।
- राम भजते-भजते साधक मुक्ति तक पहूंचता है।
- हरिनाम न भूले तो जगत के भोग भी योग बन जाएगा।
- अच्छी घटना जब घटती है तब अस्तित्व को पहले खबर होती है।
- वंदनीय महापुरुषों की चित्र या छबि पूजागृह में मत रख़ो, रख़ना है तो दिल में रखो।
- साधु के दर्शन से पाप का नाश होता है।
- बोध से क्रोध की मात्रा कम होगी।
- काम की मात्रा घटेगी रामभजन से।
- अतिशय भोग आदमी को रोगी बनाता है।
- माया जब प्रभावित करती है तब बड़ों-बड़ों की तपस्या हिलती है।
- अग्नि प्रकाशक भी है और दाहक भी है।
- वृक्ष भव्य होता है, बीज दिव्य होता है।
- आदमी का विशुद्ध प्रेम मूर्ति को बुलवा सकता है।
- बुद्धि की निरंतर हाजरी हमें रस से दूर कर देती है।
- समय बदले तो अपने भी परायें हो जाते हैं!
- विद्या विक्रय और विवाद की मानसिकता से मुक्त होनी चाहिए।
- विरोध अस्वस्थ मानसिकता का परिचय है।
- जब तक आप के मन में शिकायत है, आप धार्मिक हो सकते हो, आध्यात्मिक नहीं।
- आप रूप बदल सकते हैं लेकिन स्वरूप नहीं बदल सकते, वाणी और वर्तन नहीं बदल सकते।

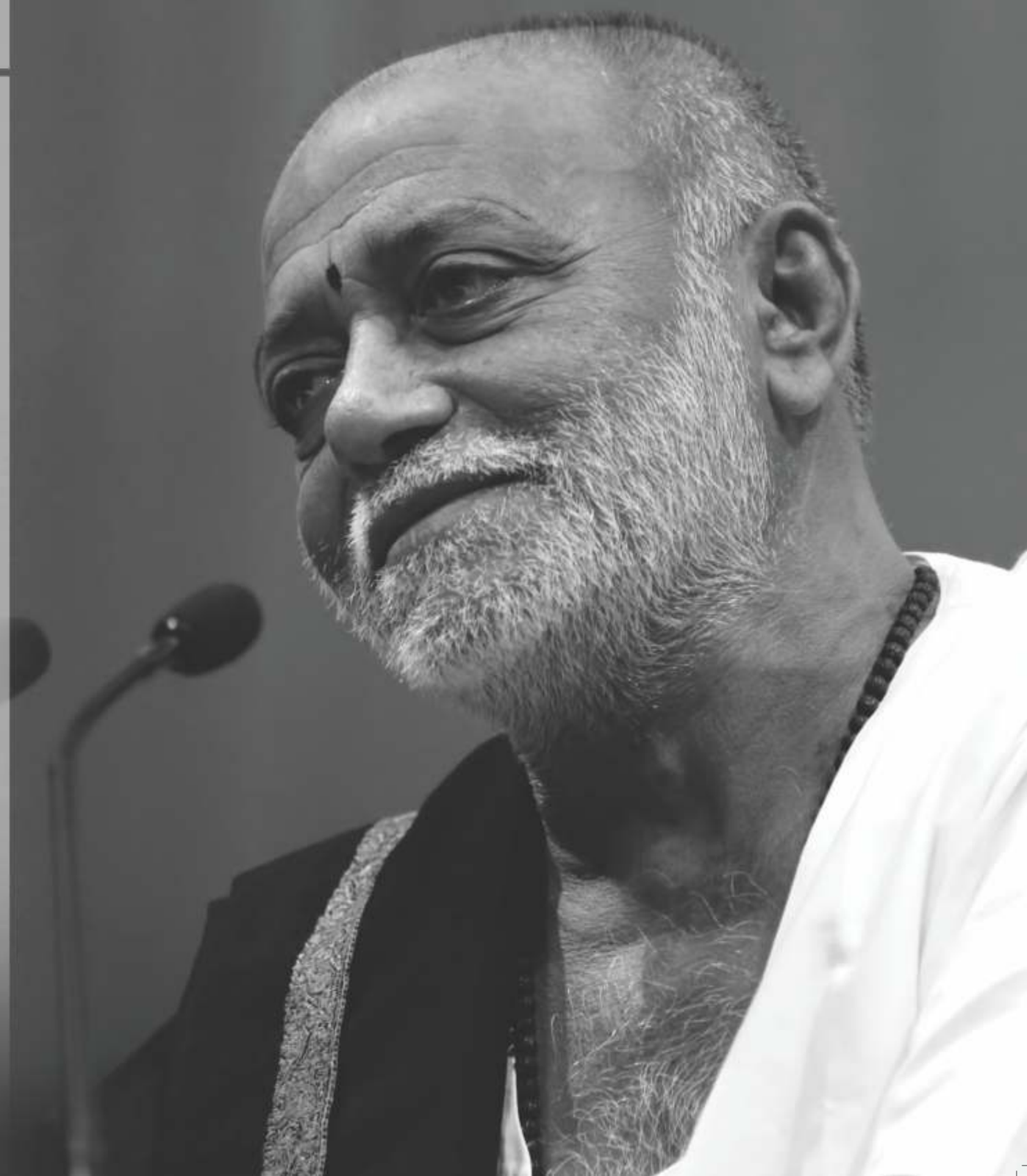

हनुमानजी संत है, लक्ष्मणजी अनंत है और राम भगवंत है

'मानस-कामदर्शन', जो इस कथा का केन्द्रीय विचार है उस पर हम मिलकर संवाद कर रहे हैं। बहुत से प्रश्न उसी संदर्भ में आते हैं। मेरा जो कुछ कहना है वो रामकथा के आधार पर कहना है। कुछ गुरुकृपा जरूर काम करती है, कुछ भगवद्कृपा से अनुभव भी काम कर लेते हैं। कामदर्शन के बारे में अब भगवान राम के कुछ विचार सुनिए और उसके बाद भगवान शिव के भी कुछ विचार सुनिए। दोनों ने अपने विचार 'मानस' में प्रस्तुत किये हैं। इससे पूर्व मैं कहूं, हनुमानजी संत है; लक्ष्मणजी अनंत है, उसका एक नाम अनंत है; और भगवान राम भगवंत है। और मैं आप से कोई नई बात बताने नहीं जा रहा हूं लेकिन आप रामकथा के पाठक है, श्रोता है, इसलिए मैं ध्यान आकृष्ट करना चाहता हूं कि एक संत, एक अनंत, एक भगवंत। रामकथा में तीनों को काम ने प्रभावित किये हैं; ये सत्य को नकारा नहीं जा सकता। हमारी किसी के प्रति अत्यंत निष्ठा हो ये बहुत ऊंची बात है। और इस रागात्मिता तो भक्ति के कारण कभी-कभी कुछ दोष दिखने में न भी आए।

आपको कामदर्शन ठीक से करना है तो मैं तो इस विषय में ज्यादा नहीं जा पाऊंगा, लेकिन कभी नारद का 'भक्तिसूत्र' एक बार पढ़ लीजिए, प्लीज़। उसमें कितने प्रकार की आसक्ति का वर्णन किया है! इसमें एक आसक्ति का नाम है कामासक्ति। इस सब्जेक्ट को अवोईड नहीं किया जा सकता। 'बुरा है!' ऐसी गालियां देना आसान है, इससे गुज़रना मुश्किल है। गाली तो कोई नासमझ अच्छे से अच्छे आदमी को भी दे सकता है! क्या करोगे? क्योंकि देनेवालों की संख्या ज्यादा होती है, जिसको दी जाती है वो तो गिने-चुने होते हैं। और ये कम मात्रा में जो होते हैं उसको फिर चुप होना पड़ता है। मैं न भूलता हूं तो शायद नवाज़ देवबंदीसाहब का शे'र है कि-

मज़ा देखा मियाँ सच बोलने का,
जिधर तू है उधर कोई नहीं है!

जहां तू सत्य लेकर बैठा है वहां तो भीड़ नहीं है! भीड़ तो वहां है, जिसको गालियां देनी है! यहां सच बोलनेवालों की हत्या कर दी जाती है! यहां पयगंबर मोहम्मदसाहब को हिज़रत करनी पड़ती है; सुक्रात को विष पिलाया जाता है! ये दुनिया बड़ी विचित्र है! जागृतिपूर्वक व्यवहार करो। यहां से हम भाग नहीं पाएंगे; लेकिन जगत की ये तासीर है। मैं मेरे 'मानस' से आप को कहूं कि जो अयोध्या राम के वियोग में प्राण छोड़ने को तैयार थी; तुलसीजी लिख़ते हैं, 'घर मसान परिजन जनु भूता।' राम बन में गए तो सब को लगा, हम स्मशान में बस रहे हैं! और परिवारजन सब को भूत

लगते थे! विरह ऐसा था। चौदह साल तक इतने राममय रहे ये लोग। राम राजा हुए और एक दिन गुप्तचरों से माहिती प्राप्त की; राम ने सुना कि एक रजक कहता है, जानकी अपने घर में रख़ने योग्य नहीं है, क्योंकि वो असुर के पास रह चूकी है; राम ने उसको रखा वो ठीक नहीं है। ये यही प्रजा है! निनु मझुमदार की बोली में गाऊं तो-

थशे रामजी राजा ने अमारी महाराणी सीता.

सब अयोध्यावासी गाते थे। इन लोगों को जानकी और राम की ओर ऊंगली उठाने में देर नहीं लगी! ये त्रेता था। कलियुग को क्यों गालियां देते हो? ये दुनिया की आलोचना नहीं है, दुनिया की प्रकृति का दिग्दर्शन है। हमारे भावनगर में एक गुजराती शायर हुआ, नाज़िर देखैया; वो कहता है-

पथिक तुं चेतजे पथना सहारा पण दगो देशे.
धरीने रूप मंज़िलनुं उतारा पण दगो देशे.

हे यात्री, सावधान रहना; तेरी यात्रा में जो तेरे सहारे बननेवाले हैं वो ही दगा देगा! मंज़िल के खूबसूरत लिबास में तुम्हें निवासस्थान भी दगा देगा।

मने मजबूर ना करशो, नहीं विश्वास हुं लावुं,
अमाराना अनुभव छे, तमारा पण दगो देशे.

मीरां को जहर! क्या गुनाह था एक निर्दोष महिला का? हमारा एक बहुत बिलग ढ़ंग का शायर-गीतकार रमेश पारेख तो कहता है-

गढ़ ने होंकारो तो कांगराय देशे,
पण गढ़मां होंकारो कोण देशे?
राणाजी, तने ऊंबरे होंकारो कोण देशे?
हवे तारो मेवाड़ मीरां छोड़शे.

हमारे खेल के कारण कोई साधु चला न जाए! जमाने का कर्तव्य है निभाना।

तो, हनुमंत, अनंत, भगवंत 'रामायण' के तीनों पात्रों पर कामदेव ने प्रभाव डाला है, इन सत्य को अनदेखा न किया जाए। यद्यपि इन तीनों को काम कुछ नहीं कर सकता। अग्निना अति तप्त धूणानी पासे बरफनो गांगडो झाझुं टकी शकतो नथी। फिर भी इन परम पात्रों ने 'मानस' की लीला में अपने आप को काम के द्वारा कोई बंधन में आया, कोई मूर्छित हुआ और फिर बंधन में आया-ये हमें दिखाकर हम को सिग्नल दिया है, सावधान किया है।

'सुन्दरकांड' में हनुमानजी अशोकवाटिका में फल खाने लगे; अक्षयकुमार आया और मार दिया! ओर आये, मारे! आख़िर में रावण ने इन्द्रजित को भेजा है। इन्द्रजित काम है। अब काम आक्रमण करने आया, हनुमानजी ब्रह्मचारी है। ब्रह्मास्त्र छोड़ता है काम! हनुमानजी मुस्कुराए कि एक नहीं, हजार ब्रह्मास्त्र को मैं टुकड़ें-टुकड़ें कर सकता हूं लेकिन मैं इस शस्त्र का स्वीकार नहीं करूंगा तो शस्त्र की महिमा मिट जाएगी। हनुमानजी जानबूज़कर गिरे। इन्द्रजित हनुमानजी को बांधकर रावण की सभा में ले गया। काम हनुमंत जैसे संत को मार नहीं सकता लेकिन हनुमानजी दिखाना चाहते हैं कि मेरे जैसे ब्रह्मचारी को, संत को भी काम कुछ क्षणों के लिए बांध सकता है, इसलिए इस सत्य को अनदेखा न किया जाए। तो, हनुमानजी बंधे।

लक्ष्मणजी को भी काम मूर्छित कर सकता है। जाग्रत पुरुष है लक्ष्मणजी; लेकिन लक्ष्मणजी मूर्छित हुए, हमें सावधान करने के लिए कि काम की शक्ति को गंभीरता से लीजिएगा। और तीसरा प्रसंग, साक्षात् ब्रह्म। उसको भी इन्द्रजित ने ही नागपाश में बांधा है। लीला की रणक्रीड़ा करने के लिए ठाकुर बंधे। बंधे जरूर लेकिन जैसे रामजी रण के मैदान में इन्द्रजित के द्वारा बंध गए,

बड़ों-बड़ों को आश्चर्य हुआ और सब से बड़ी शंका तो हुई गरुड को। गरुड आता है, भगवान को मुक्त करता है। तब से वहम घुस गया उसके मन में कि ये काहे का ब्रह्म? इसमें से तो पूरी 'कागभुशुंडि रामायण' प्रगट होती है। विष्णु का वाहन है गरुड। आ नजीकवाळाने ज क्यारे वहेम पडे, कांई न कहेवाय! तो, बाप! तीनों परम तत्त्वों को काम ने प्रभावित किया है, हम को दिखाने के लिए।

तो, 'रामचरित मानस' में शिवजी स्वयं थोड़ा कामदर्शन पेश करते हैं। और स्वयं रामजी भी कामदर्शन पेश करते हैं; उसका जरा ध्यानपूर्वक स्वस्थ और प्रसन्न चित्त से श्रवण करें। प्रसंग है 'अरण्यकांड' का। सीताजी का अपहरण हो चुका है। जानकी की ख़ोज में राम-लक्ष्मण निकलते हैं। और फिर जटायु को पितातुल्य आदर देकर जटायु को सारूप्यमुक्ति देते हैं। फिर भगवान जानकी की ख़ोज करते-करते आगे बढ़ते हैं और भगवान शबरी के आश्रम में आते हैं। शबरी धन्य हुई। भगवान वहां भक्ति की नव विधा का वर्णन करते हैं। फिर शबरी योगअग्नि में अपने देह को समर्पित करके परमात्मा के उस स्थान पर पहुंच गई जहां से फिर कभी लौटना न पड़े। और भगवान फिर पंपा सरोवर की ओर गति करते हैं।

वहां लिखा है कि कामदेव अपनी सेना लेकर आता है। सोचा कि राम अकेले हैं, घीर लूं। और इस वर्णन में मैं नहीं जाऊंगा। पूरा वातावरण कामदेव ने निर्मित कर दिया। लेकिन कामदेव के सखा वायुदेव ने जाकर कहा, अकेले नहीं है, दो है। तब कामदेव वहां ड़ेरा डाल देता है। और फिर भगवान ये सब काम का प्रभाव देखते-देखते अपने श्रीमुख से कहते हैं-

देखहु तात बसंत सुहावा ।
प्रिया हीन मोहि भय उपजावा ।।

फिर भगवान जो बात कहते हैं वहां राम की आंखों से कामदर्शन है-

लछिमन देखत काम अनीका ।
रहहिं धीर तिन्ह कै जग लीका ।।
एहि कें एक परम बल नारी ।
तेहि तें उबर सुभट सोइ भारी ।।

हे लक्ष्मण, ये काम की सेना देख। ऐसे कामप्रभाव में जो धैर्य धारण कर सकता है उसकी कीर्ति की जग में एक लिख बन जाती है। मुश्किल है, बातें तो होती है; बाकी चारों ओर से तमाम प्रकार की सुविधा हो उसी समय आदमी हिले ना उसकी लिख जगत में अंकित होती है। सत्य स्वीकार करना ही चाहिए। हां, एक वस्तु मैं अनुभव से कहूं, ये आत्म निवेदन है; आप को एक वस्तु खरे मौके पर धीरज दे सकती है, ये है भजन। एकमात्र उपाय। मैं आप से एक प्रश्न पूछुं, किसी को आप कहो कि नाह लो; और पानी भी इतना ठंडा नहीं है, तू युवान हो, गंगा का तट है। तो हमें कहे कि मैं गंदा हूं, कीचड़वाला शरीर है, कैसे नहाऊं? पहले मैं स्वच्छ हो जाऊं, फिर नहाऊं। क्या ये दर्शन ठीक है? नहाने से ही तेरी गंदगी जाएगी, तू कूद पड़! कोई कहे, हम में कामादि विकार है, भजन कैसे करें? अरे, यार! भजन शुरू कर दे, चोक्खा हो जाएगा। मेरे तुलसी लिख़ते हैं; मुझे बल वहीं से मिलता है।

साहब, 'वाल्मीकि रामायण' में सात कांड है। तुलसीजी का जो 'रामचरित मानस' है उसमें सात सोपान है। लेकिन मोरारिबापू, जिस तरह मेरी व्यासपीठ गाती है, उसमें ख़बर नहीं, कितने-कितने सोपान मिल जाते हैं! साहब, बातें तो होती है! मने आटलां वर्षे हवे लागे छे के हुं आ बधां बणगां तो नथी फूंकतो ने? आ बोलीबोलीने केटलुं बोलवुं? क्यां बोलुं? बावन अक्षर को इधर-उधर जोड़कर; लोग शब्द प्रभाव में आ जाते हैं, सोचो! और बोला जा रहा है, जिसका कोई अनुभव न हो वो बोले जा रहे हैं! मुझे 'मासुम'साहब का शे'र फिर याद आ रहा है-

उसको किसने इज़ाज़त दि गुलों से बात करने की,
सलीका तक नहीं जिसको चमन में पांव रखने का ।

तो, बाप! जो ऐसे तमाम प्रलोभनों के बीच धैर्य धारण कर सकता है जगत में लक्ष्मण, उसकी कीर्ति की एक लिख खींची जाती है। और फिर राम जो कामदर्शन पेश कर रहे हैं वहां बोले, 'एहि कें एक परम बल नारी।' हे लक्ष्मण, काम को एक सब से बड़ा बल है नारी। नारी का उपयोग करता है ये आदमी। नारी को साधन बना रहा है, नारी उसका बल है। नारी का दोष नहीं, कामावेग नारी को उपकरण बना देता है। गोस्वामीजी कहते हैं, इससे जो उभर जाए, बच जाए वो बड़ा वीर है। ये राम की बोली में कामदर्शन है। लक्ष्मणजी से बात कर रहे हैं; देखो-

तात तीनि अति प्रबल खल काम क्रोध अरु लोभ ।
मुनि बिग्यान धाम मन करहिं निमिष महुँ छोभ ।।

काम सेना है; और सेना के कुछ सुभट्ट होते हैं बड़े; ये तीन है-काम, क्रोध, लोभ। और बड़े-बड़े मुनि जो विज्ञानधाम है, ऐसे विज्ञानधाम मुनिलोगों के मन में भी

ये तीनों एक पलक में क्षोभ पैदा कर देता है; हिला तो देता है। फिर कामदर्शन पेश करते राम बोले-

लोभ कें इच्छा दंभ बल काम कें केवल नारि ।
क्रोध कें परुष बचन बल मुनिबर कहहिं बिचारि ।।

हे लक्ष्मण, लोभ को दो बल है; एक इच्छा; ये हो, इससे लोभ पुष्ट होता है। और फिर लोभी दंभ करता है। हमारे देहातों में तो हम सुनते रहते हैं कि कहते हैं कि आप तो बहुत सुखी है, पंद्रह-पंद्रह गाडियां है, इतना राजभवन है! तो बोलते हैं, 'ठीक है, दाल-रोटी निकालते हैं।' ये दंभ है! इच्छा और दंभ से लोभ पुष्ट होता है। ज्यादा विस्तार न करूं। फिर कहते हैं, 'काम कें केवल नारि।' कामदेव, यदि मातृशरीर जगत में न होता तो जगत में सफल न होता। उनका एक बल है। केवल और केवल एक बल है स्त्री। और क्रोध के बल है, कर्कश वचन, कटुबोली। और राम बोलते हैं, राम का दर्शन तो परफेक्ट होता है फिर भी कहते हैं लक्ष्मण, ऐसा मुनिवर लोग विचार करके बोलते हैं। हमारे देश का प्रवक्ता कितना सरल है! ये राम बोल रहे हैं और ये वक्तव्य शंकर भवानी को सुना रहे हैं। अब शंकर का दर्शन आ रहा है-

गुनातीत सचराचर स्वामी ।
राम उमा सब अंतरजामी ।।

हे पार्वती, रामजी कामदर्शन बता रहे हैं इसका मतलब ये नहीं समझना कि राम लिप्त है। राम कौन है? ये गुणातीत है। और क्या है? सचराचर स्वामी है और अंतरजामी है। शायद पार्वतीजी पूछे कि फिर ये काम की चर्चा क्यों करते हैं? तो शिवजी तुरंत जवाब देते हैं-

कामिन्ह कै दीनता देखाई ।
धीरन्ह कें मन बिरति दृढ़ाई ।।

हे पार्वती, भगवान ऐसा कामदर्शन दिखाकर कामी की दीनता दिखा रहे हैं और ये दीनता दिखाकर जो धैर्यवान है उनका वैराग्य पुष्ट करते हैं। लेकिन सुन पार्वती, शायद प्रश्न पूछे कि ये सब ख़ल है, भयंकर है, तो उससे मुक्त होने का कोई उपाय? तो, अब उपाय बताते हैं। डोक्टर का फ़र्ज़ है, निदान भी दे, औषधि भी दे। अब सब का उपाय बता देते हैं-

क्रोध मनोज लोभ मद माया ।
छूटहिं सकल राम कीं दाया ।।

काम, क्रोध, लोभ, मद, माया; हे पार्वती, इन से तभी छुटकारा मिलता है जब राम की कृपा हो जाए। ये पांचों से निवृत्ति तभी होती है जब राम की दया हो जाए। अब राम दया करे तो ही ये जाए तो इससे तो अकर्मण्यता पैदा नहीं हो जाएगी? आख़िर में तो दया होगी तभी ये होगा फिर भी साधक का भी कर्तव्य है कुछ गुरु के निर्देश के मुताबिक कुछ विनम्रता से करे; पहले तो ये लिख ले दिल में कि छूटेगा तो राम की कृपा से फिर भी गांठ तो गुरु छोड़ेगा लेकिन वो गांठवाला कपड़ा तो हम न छिपाए; बताए तो सही, इतना तो हम करें। गुरु जबरदस्ती नहीं करता।

बाप, पहले यहां 'क्रोध' शब्द का प्रयोग हुआ है। राम की कृपा से ही क्रोध छूटेगा, लेकिन थोड़ा हम करें। क्या करें? साधुसंग में बैठकर थोड़ा-थोड़ा बोध ग्रहण करें। जैसे-जैसे बोध की पूंजी इकठ्ठी होगी, क्रोध छूटने लगेगा। और फिर पूरा का पूरा काम तो हरिकृपा कर देगा। तो, क्रोध जाएगा थोड़ा बोध से; और बोध के लिए चाहिए कोई बुद्धपुरुष का आश्रय। आज किसी ने पूछा है, 'नियमों में मन अनुरक्त है तो सद्गुरु के पास जाना श्रेयस्कर है या उनकी कृपा बरसने का इंतज़ार करना चाहिए?' देखो, कृपा तो बरस ही रही है। यदि हम आत्मसात् न कर सके तो थोड़ा और करीब जाओ। सत्संग की महिमा है; गुरुद्वार जाने की अपनी एक अनूठी

श्रद्धा है। ये आवश्यक है, जैसी साधक की स्थिति।

तो, बाप, बोध; बोध से क्रोध की मात्रा कम होगी। बाकी का काम कृपा कर देगी। फिर 'मनोज' मानी काम। काम की मात्रा घटेगी रामभजन से। शुरूआत में कष्ट होगा; शायद ज्यादा आक्रमण हो लेकिन छोड़ना मत। राम भजते-भजते साधक मुक्ति तक पहूंचता है। और तुलसी ने सब दरवाज़ें खोल दिए, 'भायँ कुभायँ'; और राम का मेरा अर्थ छोटा नहीं, आप जिसको मानते हो उसीका नाम, उसकी याद, उसकी स्मृति। बोध से क्रोध की मात्रा कम होगी और राम से काम की मात्रा कम होगी। और लोभ की मात्रा कम होगी क्षोभ से। क्षोभ होना चाहिए आप को। एक सामान्य आदमी, मज़दूरी करनेवाला जब पांच हजार रूपया दे देता है किसी परमार्थ के लिए तो पांच करोडवाला बगल में बैठा है वो लोभी को क्षोभ होना चाहिए और जब क्षोभ होता है तब उसको लगता है कि कुछ देना चाहिए। भगवान करे लोभी को क्षोभ मिले। फिर आता है 'मद।' समाज का कोई पद मिला तो मद की मात्रा घटती नहीं; मद की मात्रा घटेगी कोई ऐसा चरण पकड़ने से, गुरुपद।

बंदउँ गुरु पद पदुम परागा ।
सुरुचि सुबास सरस अनुरागा ।।

और माया छूटेगी, कृपा करेगी; माया के मालिक बनने का इरादा छोड़कर माया की संतान बनने से वो दूध पिलाएगी। हम माया के मालिक बनना चाहते हैं! तो, राम कामी की दीनता दिखा रहे हैं। और धैर्यवान का धैर्य-

सो नर इंद्रजाल नहिं भूला ।
जा पर होइ सो नट अनुकूला ।।

वो आदमी जादूगर की जादूगरी में भूला नहीं होता जिस पर नचानेवाला नट अनुकूल हो। दर्शकों को लगेगा कि क्या जादू है! लेकिन उनमें जो काम करता है और उसे जो काम करा रहा है वो ठाकुर उस पर तुष्ट है तो वो इन्द्रजाली में फंसता नहीं, उसके रहस्यों को जान लेता है।

राम ने कामदर्शन लक्ष्मण को सुनाया; भवानी को शिवजी उपसंहार करते-करते उपाय भी बता देते हैं और फिर पार्वती शायद पूछे कि ये तो राम बोले और आप ने उसका अर्थ किया, लेकिन इस उपाय से कोई फायदा हुआ ऐसा कोई है? तब शंकर के वचन सुनिए-

उमा कहउँ मैं अनुभव अपना ।
सत हरि भजनु जगत सब सपना ।।

अब, त्रिभुवनगुरु वेदराज भगवान शंकर उपाय कहते हैं, अनुभव कहते हैं कि हरिभजन सत है, बाकी सब सपना है। ये अपना अनुभव भी शिवजी उद्घोषित करते हैं।

तो, 'मानस' में कुछ राम के द्वारा दिया गया कामदर्शन और उस पर भगवान महादेव की जो टिप्पणी है, कारिका है वो मैंने आप के सामने थोड़ी पेश की। कथा का क्रम दस-पंद्रह मिनट में ले लूं। भगवान शिवजी से पार्वती ने कथा के बारे में जिज्ञासा की। और भगवान शंकर तैयार हुए, 'देवी, यद्यपि ईश्वर को कार्य-कारण सिद्धांत लागू नहीं होता फिर भी हरि कुछ हेतु निर्मित करके आता है। भगवान महादेव ने पार्वती को पांच कारण बतायें; जय-विजय, सतीवृंदा का श्राप, नारदजी का श्राप, मनु-शतरूपा की तपस्या और राजा प्रतापभानु।

आप जानते हैं 'मानस' में राम के जन्म के पूर्व रावण के जन्म की कथा हुई। पृथ्वी रावण के त्रास से संत्रस्त हो गई। भयंकर आतंक फैल गया, ऐसे समय में गाय का रूप लेकर पृथ्वी ऋषिमुनिओं के पास जाती है। उसके बाद देवताओं के पास गई। वहां से सब ब्रह्माजी के पास जाते हैं। देवताओं ने समूह में प्रार्थना की।

आकाशवाणी हुई, 'देवगण, धैर्य धारण करो, यद्यपि कोई कारण नहीं है लेकिन कई कारणों से मैं अयोध्या में जन्म धारण करूंगा।' और गोस्वामीजी हम को लिए चलते हैं श्री अयोध्याजी, जहां ठाकुर का प्रागट्य होनेवाला है।

अयोध्या में रघुवंश का सार्वभौम राज्य है। महाराज दशरथजी वर्तमान महाराज, जो कर्मयोगी है, भक्तियोगी है, ज्ञानयोगी है। उनकी रानियां कौशल्यादि प्रिय रानियां; महाराज रानिओं को प्रेम देते हैं; रानियां महाराज को आदर देती हैं। और सपत्नी महाराज दशरथजी परमतत्त्व की आराधना करते हैं। एक बार महाराज को ग्लानि हुई कि मुझे कोई पुत्र नहीं है। अब किसको कहे ये पीड़ा? दशरथजी ने हम सब का मार्गदर्शन दिया कि दुनिया में अपनी पीड़ा हम कहीं न कह पाए तो अपने गुरु के पास जाना। दशरथजी वसिष्ठजी के द्वार आए। अपना सुख-दुःख निवेदित किया। यज्ञ हुआ; यज्ञकुंड से यज्ञपुरुष प्रसाद का चरु लेकर बाहर आए। यज्ञ का प्रसाद राजा ने अपनी रानिओं को जथाजोग बांटा। तीनों रानिओं ने प्रसाद पाया। स्वयं हरि कौशल्या के गर्भ मे पधारे हैं। प्रभु को प्रगट होने का अवसर आया। पंचांग अनुकूल हुआ। त्रेतायुग, चैत्रमास, शुक्ल पक्ष, नवमी तिथि, मध्याह्न। पूरा जगत जिसमें निवास करता है अथवा तो पूरे जगत में जिसका निवास है ऐसे परमात्मा, ईश्वर, भगवान, ब्रह्म-जो कहना चाहो, माँ कौशल्या के भवन में प्रगट हुए-

भए प्रगट कृपाला दीनदयाला कौसल्या हितकारी।
हरषित महतारी मुनि मन हारी अद्भुत रूप बिचारी।।

माँ कौशल्या के सन्मुख चतुर्मुख विग्रह प्रगट हुआ है। माँ को ज्ञान हुआ। प्रभु ने मुस्कुरा दिया। माँ कहती है, 'आप बालक हो जाओ; मैंने पुत्र की मांग की थी, आप पिता बनकर आए हैं। आप नारायण बनकर आए हैं, नर बनकर आओ।' भगवान दो हाथवाले नररूप में आए। भारत की माँ प्रभु को मनुष्य बनना सिखाती है, रोना सिखाती है। प्रभु कौशल्या के अंक में नवजात शिशु बनकर रोने लगे। अब राम का प्रागट्य हुआ। शिशु के रुदन की आवाज़ सुनते ही ओर माताएं दौड़ आई! दासियां ने दशरथजी को बधाई दी। दशरथजी वसिष्ठजी को बुलाते हैं। दशरथजी को बधाई सुनते ही ब्रह्मानंद हुआ था लेकिन वसिष्ठजी ने खरा किया कि ये ब्रह्म है तब परमानंद हुआ है। और पूरी अयोध्या में भगवान रामजनम की बधाईयां शरू हुई है। इस तीर्थभूमि में आए श्रोता भाई-बहन और पूरी दुनिया को श्राद्धपक्ष में हो रहे रामजनम की इस व्यासपीठ से बधाई हो।

ये दुनिया बड़ी विचित्र है! जागृतिपूर्वक व्यवहार करो। यहां से हम भाग नहीं पाएंगे; लेकिन जगत की ये तासीर है। मैं मेरे 'मानस' से आप को कहूं कि जो अयोध्या राम के वियोग में प्राण छोड़ने को तैयार थी, तुलसीजी लिख़ते हैं, 'घर मसान परिजन जनु भूता।' राम वन में गए तो सब को लगा, हम स्मशान में बस रहे हैं! और परिवारजन सब को भूत लगते थे! विरह ऐसा था। चौदह साल तक इतने राममय रहे ये लोग। राम राजा हुए और एक दिन गुप्तचरों से माहिती प्राप्त की; राम ने सुना कि एक रजक कहता है, जानकी अपने घर में रख़ने योग्य नहीं है, क्योंकि वो असुर के पास रह चूकी है; ये यही प्रजा है, इन लोगों को जानकी और राम की ओर ऊंगली उठाने में देर नहीं लगी!

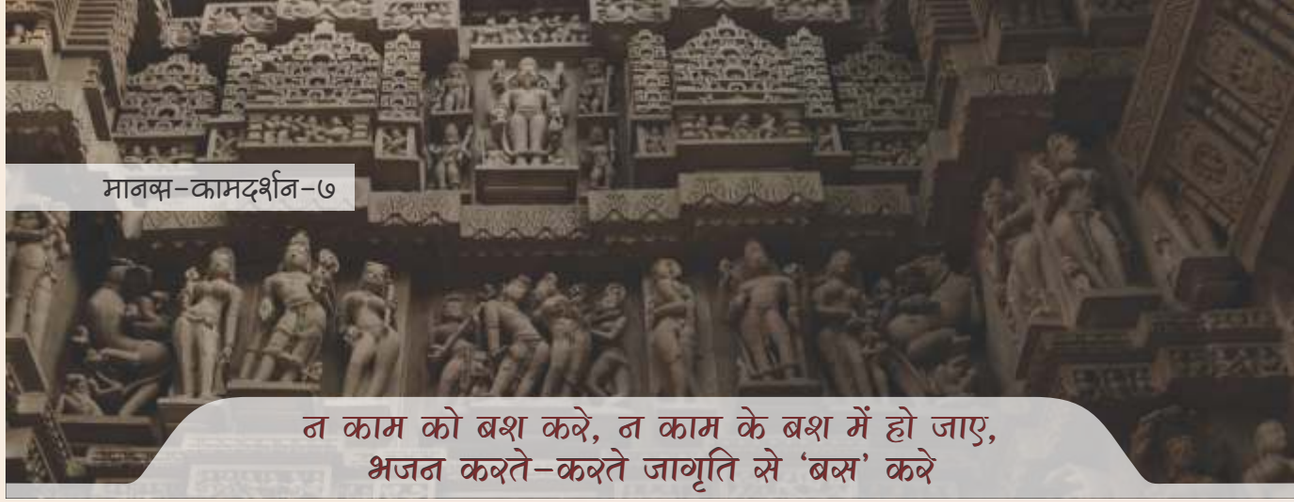

न काम को बश करे, न काम के बश में हो जाए, भजन करते-करते जागृति से 'बस' करे

इस नवदिवसीय सात्त्विक-तात्त्विक संवाद का केन्द्रबिंदु है 'मानस-कामदर्शन।' मैं रोज कहता हूं, मेरे पास जिज्ञासाएं आती है बहुत-सी। एक बात आज आई है कि 'बापू, आपने बहुत गहन विषय उठाया है!' जो जीवन की सहजता और सत्य है उसको गहन क्यों समझते हो? कुछ छिपा रहे हो। सांस लेना गहन और दुर्लभ काम है? सांस लेना जितना सहज है; यदि सांस लेना सहज नहीं है तब हम रुग्ण करार दिए जाते हैं। आप को पता होना चाहिए कि काम की धर्मपत्नी का नाम रति है। और भरतजी तो परमसंत है 'मानस' के। भगवान रामजी भरतजी के लिए एक मंत्र बोलते हैं-

भरतु हंस रबिबंस तड़ागा।
जनमि कीन्ह गुन दोष बिभागा।।

'हे लक्ष्मण, रघुवंश एक तालाब है। इनमें हमारा भरत हंस है।' लेकिन तीर्थराज प्रयाग में जब स्नान करते हैं और तीर्थराज प्रसन्न होते हैं तब भरतजी एक भिक्षुक बनकर अपना दामन फैलाते हैं कि मुझे भीख़ दो। 'मैं भीख मांग रहा हूं, मैं क्षत्रिय हूं फिर भी।' और क्या मांगते हैं भरतजी?

अरथ न धरम न काम रुचि गति न चहउँ निरबान।
जनम जनम रति राम पद यह बरदानु न आन।।

अर्थ नहीं चाहिए, धर्म नहीं चाहिए, निर्वाण नहीं चाहिए। उसमें एक शब्द है कि काम की रुचि नहीं है। चारों पदार्थों को वो नकार रहे हैं। अर्थ बिलकुल नहीं चाहिए; पूरी राज्यसत्ता छोड़ने को तैयार है ये आदमी। और अभी-अभी कह रहे हैं, 'त्यागि निज धरमू', धरम नहीं चाहिए। आदमी नास्तिक हो गया! और तीसरा? 'गति न चहउँ निरबान।' वो बिलकुल नकारा। लेकिन मुझे अच्छा लगता है, जब काम की बात आइ, यद्यपि भरत काम चाहता नहीं है, लेकिन वहां 'रुचि' शब्द का प्रयोग है। यद्यपि मेरे मन में कहीं काम की रुचि नहीं है, परंतु इसको तद्दन नकारा नहीं जा सकता। कहीं अज्ञात चित्त में वो ऊर्जा है, वो रहती है। कोई अच्छा आदमी ऐसा नहीं कहता कि हमें आप नहीं चाहिए, आपकी बीबी चाहिए! भरत ऐसी भूल कर सकता है?

मेरी दृष्टि में 'रामचरित मानस' रहस्यपूर्ण शास्त्र है। कोई भला मानवी ऐसा कह सकता है कि मुझे आप की बीबी दो? और ये आदमी कहता है, 'जनमजनम!' भरत कहता है कि मुझे काम नहीं लेकिन उसकी पत्नी मिले। भरत कुछ छिपाते नहीं है यहां। जनमजनम मेरी रति मुझे चाहिए। रति यानी इसमें गुप्तरूपेण इस ऊर्जा का स्वीकार है। रुचि

नहीं है, मुझे भोगना नहीं है कुछ, क्योंकि मैंने राम भज लिया है। मैं फिर कल का सूत्र दोहराऊं कि आदमी कहता है कि मैं गंदा हूं, कैसे नहाऊं? एक बार शुद्ध हो जाऊं तो नहाऊं! ये गलत धारणा है। नहाने से तू शुद्ध होगा। काम छूट जाए फिर राम भजूं, सूत्र ठीक नहीं है। राम भज लूं तो काम छूट जाएगा।

अब, रति को समझाने के लिए मैं उसे एक नारी के विग्रह में पेश करूं। रति ने मुस्कुराकर नहीं कहा होगा कि मेरे पति में आप की रुचि नहीं है लेकिन चलो अच्छा है, मेरे पति को आप पहचानते तो हो ना! पहचानना तो पड़ेगा ही। जीवन के सत्य को नकारा न जाए। मैं एक सूत्र ओर दूं। न काम के बश में होना है; यद्यपि हम हो जाते हैं क्योंकि 'भए कामबस जोगीस पावँरन्हि की को कहै।' ये तुलसी का स्पष्ट कामदर्शन है; क्योंकि तुलसी का पहला गुरु काम है। मुझे पक्का विश्वास है, गोस्वामीजी नाराज नहीं होंगे। तुलसी की चेतना कभी नाराज नहीं हो सकती। हो सकता है, श्राद्धपक्ष में तुलसी का एक अच्छा श्राद्ध होगा। तुलसी के तीन गुरु। पहला गुरु उनकी पत्नी है। हमारे तुलसी अवोर्ड में वो माताजी आई थी, उसका एक काव्य हम जो कथा कर रहे थे, मांडल में, वीरमगाम में, बहुत साल हो गए, जमाने गुज़र गए, यार! कहां-कहां घूमे हैं! कथा ने घुमाया हैं! हमारे नीतिनभाई कहते हैं-

पोथीने परतापे क्यां क्यां पूगियां,
भगवा रे अंकाशे जईने ऊडिया...

और अपने विवेक को बरकरार रख़ते हुए जो संपादन करते हैं रामकथा का। कितना समय देकर विवेक से उसका संपादन हो रहा है! मैं सुबह पढ़ रहा था हमारे हापुडीदादा के दो शे'र-

अपना चेहरा देख न पाए,
औरों को शीशा दिखलाए।

बिलकुल सीधा, आरपार, माँ के दूध की तरह!

इस दुनिया में कौन बुज़ाए,
जब पानी ही आग लगाए !

तो, तुलसी के पहले गुरु है उनकी पत्नी। मैं वो पद गाता रहता हूं-

'रामायण' के अमर प्रणेता,
कोमल श्रद्धा सुमन चढ़ाओ।
पर रत्ना के अमर त्याग को
नमन करो, तुम भूल न जाओ।

कवयित्री कहती है कि 'रामायण' के अमर प्रणेता तुलसी है, उसके चरणों में कोमल श्रद्धा के फूल चढ़ाओ। लेकिन रत्ना के अमर त्याग को नमन करो, तुम भूल न जाओ। फिर कहती है-

वो नारी कितनी महान थी?
जिसने विषयी संत बनाया।

एक विषयी तुलसी को जिसने संत बनाया। किसी भी संत का अपना भूतकाल होता है और किसी भी पापी का अपना भविष्य भी होता है। और मैं बीच में भी कह गया कि तुलसी मुर्दे को नौका समझ लेते हैं। और गए रत्नावली के घर रात को। और वो रत्नावली कहती है जैसी प्रीति इस हाडमांस के देह में है, ऐसी जो राम में हो जाती तो 'काही रहे भवभीति।' और कहते हैं, उसी समय आदमी मूड़ गया! तो, उनकी पहली गुरु रत्ना है, स्त्री है। पहला गुरु काम है; काम ने उसको सताया भी और चेताया भी।

तुलसी का दूसरा गुरु लोभ है। सावधानी से सुनिएगा। मैं तुलसी का श्राद्ध कर रहा हूं। ये ऊर्जा गुरु बन सकती है। और किस अर्थ में लोभ? आप के पास धन है और आप उसे बारबार गिनते रहे तो ये आप का लोभ माना जाएगा।

तदपि कही गुर बारहिं बारा।
समुझि परी कछु मति अनुसारा।।

एक ही बात घुटाते रहे गुरु, ये लोभ था और उसका लोभ सार्थक हुआ कि आदमी जाग गया। तुम एक ही मणका घुमाते हो। इसीलिए तुलसी शास्त्र के अंत में कहते हैं 'लोभिहि प्रिय जिमि दाम।' बार-बार एक ही रट-पैसा, पैसा! वैसे बार-बार रट लगाई गुरु ने कि जब तक तुलसी चेतेगा नहीं, मैं यही पुनरावृत्ति करता रहूंगा।

तुलसी के तीसरे गुरु है श्री हनुमानजी। बार-बार तुलसी चुके जा रहे थे राम को चित्रकूट में। झलक मिलती थी, चुक जाते थे! तब कोई ऐसा गुरु मिले कि सीधा संकेत कर दे कि अब चुकना मत, पकड़ ले। तीसरे गुरु है, हनुमंत। एक कामना को मोड़ दिया गया पहले गुरु के द्वारा। तो, इस ऊर्जा का स्वीकार करना पड़ेगा। भरत रति मांग रहे हैं, जनमजनम। इसका मतलब भरतजी भी जानते हैं। आप ठीक से पकड़े तो मैं कहना चाहूंगा कि किसी भी बात पर अत्यंत आग्रह भी काम है।' ऐसा ही करो, ऐसा ही होना चाहिए', ये भी तुम्हारी कामना है। काम को एक ही अर्थ में मत समझे, काम का बहुत विशाल क्षेत्र है। कामना व्यापक है, काम भी व्यापक है; जितना परमात्मा निराकार है इतना काम भी निराकार है। जितना परमात्मा हृदय में निवास करता है इतना ही कामदेव आदमी के हृदय में रहता है।

तो, मेरे भाई-बहन, रति काम की धर्मपत्नी है, छाया है। आप ने कभी सोचा है कि हमने स्त्रीशरीर को तीन रूप में देखा है। एक बिलकुल स्थूलरूप में; एक थोड़ा मध्यम और एक बहुत उपर। बहुधा हम जैसे संसार में डूबे लोगों ने नारी को केवल काया के रूप में देखा है। कुछ लोग है, जिसने केवल काया नहीं देख़ी, छाया देख़ी। जैसे पुरुष को छाया अनुसरती है, स्त्री को उनकी छाया अनुसरती है। जानकी छाया है, रावण जिसको ले गया वो छाया जानकी है। और परमतत्त्व की चर्चा करे तो नारी माया है। या तो बहुधा दुनिया ने उसको केवल काया में बंद कर दिया, कई लोगों ने छाया के रूप में देखा, किसी ने उसको परम दुष्कर माया के रूप में देखा। तो, जो प्रश्न पूछा गया कि 'कामदर्शन जैसे गंभीर विषय को क्यों लिया गया?' ये गंभीर नहीं है, ये जीवन का सत्य है।

तो, मैं आप से एक निवेदन कर रहा था कि हो सके, गुरुकृपा हो जाए, रामभजन बढ़े, तो काम के बश में नहीं होना है और काम को बश करना भी नहीं है। बश करने से ये काबू में आनेवाला नहीं है। कुछ औषधि के रूप में प्रयोग है लेकिन फिर डर तो रहता ही है। न काम को बश करे, न काम के बश में हो जाए, गुरुकृपा से भजन करते-करते 'बस' करे, रुक जाए; जागृति से 'बस' करे। और शरीर की रचना ऐसी है; शरीर सीखा देता है; शरीर गुरु है। ये रामकथा सब को लाभ देती है। जो विषयी है उसको भी फायदा देती है, साधक है उसको भी फायदा कराती है, सिद्ध है उसको भी। जो विषयीलोग है उसको मनोरंजन देती है। साधक लोग है उसको विश्राम देती है। सिद्ध को अमृतपान कराती है। तो, इसको अनदेखा न करो। ये अगम विषय नहीं है। हम दंभी है। जो बचे हैं उनको मेरा जनम-जनम प्रणाम। बाकी दंभ क्यों? जब संत कहते हैं-

मो सम कौन कुटिल ख़ल कामी।

'कपि चंचल सबहीं बिधि हीना', हनुमान कहते हैं कि मैं सब प्रकार से हीन हूं। सुग्रीव कहता है, मैं कामी पशु हूं। ये निर्दंभ उद्घोषणा है। इसलिए मेरी दृष्टि में ये कोई गहन विषय नहीं है; ये जीवन का सत्य है। तुलसी ने क्या कहा? 'काम आदि मद', काम आदि ख़राब है लेकिन जो उसका 'मद' न करे; 'तात निरंतर बस में ताके।' हरि उनके वश में हो जाता है; दंभ और मद न करे। जो पहुंच गए उनको तो जनम-जनम प्रणाम!

तो बाप, हम दंभी हो गए हैं! इसीलिए हम तनावग्रस्त है। दंभ आदमी को रिलेक्स नहीं होने देता।

मेरे भाई-बहन, जीवन की ट्रेइन दौड़ी जा रही है, भार हरि की गोद में रख दो ना, टेन्शन में क्यों जीए जा रहे हो? और तुलसी की चौपाई सीख लिजिए-

जेहि बिधि प्रभु प्रसन्न मन होई ।
करुना सागर कीजिअ सोई ।।

और हमारे अंत:करण में चित्त का काम है जनम-जनम की बातों को संग्रहित कर के इन्सान का बोझ बनना। चित्त बहुत कुछ संग्रह कर लेता है। हमारा चित्त एक ऐसा केमरा है जो हर फोटो लेकर अपने में रख लेता है। कभी किसी ने गाली दी, किसी ने निंदा की, किसीने प्रशंसा की, किसीने वो किया, ये सब चित्र हमें इकठ्ठे किए हैं! और बोझ उसका है। मैं आप से निवेदन करूं प्लीज़, कुछ बातें भूल जाओ। तो, केमेरा फोटो खींच लेता है। लेकिन एक है दर्पण, जो दिखा तो सब कुछ दिखा देता है लेकिन भीतर कुछ नहीं रखता। जब चित्त दर्पण हो जाए सत्संग के द्वारा तब टेन्शन खत्म हो जाता है।

आदमी रोज नया होना चाहिए। रोज बदलता है उसका नाम जीवन है और न बदलने की प्रतिज्ञा लेकर बैठा है वो बिलकुल मर चूका है! 'सूरज की किरण रोज नई है।'-कृष्णमूर्ति। कई लोग कहते हैं कि कथा तो वो ही की वो ही है! कथा वो ही की वो ही नहीं होती, कथा नितनूतन होती है। हम समझते हैं लेकिन बदलने को राज़ी नहीं! तुलसी एक लम्हें में बदल गये। दंभ मेरी समझ में, मेरे अनुभव में आदमी को तनावग्रस्त कर सकता है। जो हम नहीं है वो हमें दिखाना नहीं, सिद्ध करना है! ये उपदेश नहीं है, हम सब ऐसे अनुभव से गुज़रते हैं। तभी चित्त बोझिल हो जाता है। फिर कृपा की गति तेज चल रही है और हम क्यों बोझ उठाएं? रख देना किसी के चरणों में। चित्त ने ख़बर नहीं कितने चित्र संग्रह किए हैं!

तो, 'मानस' का कामदर्शन हमें निर्दंभ बनाने का एक कीमिया है; औषधि भी है; उपाय भी। तो, मेरी दृष्टि में ये कोई गहन विषय नहीं है। न किसी को बश करना है, न किसी के बश में होना है, जागे तब 'बस, बस, बस।' एक संतुष्टि। और गोस्वामीजी कहते हैं यही 'बस' कहने की एक स्वाभाविक आदत होने पर जिसको हम विकार कहते हैं, वो समाप्त हो सकता है। भूल ही जाओ कि हम काम के बश में हो गए हैं; समय आने पर 'बस, बस।' आदमी भोजन करता है और कोई ज्यादा देने आए तो कहता है,'बस, बस।'

तो, पहले राम भज लिया जाए तो ये तूफ़ान सिर पर नहीं चड़ेगा, सम्यक् रहेगा। उसी बात को पेश करते हुए 'अरण्यकांड' का एक ओर तुलसी द्वारा पेश किया गया कामदर्शन, जिसमें पहले राम भजा गया फिर काम का दर्शन प्रस्तुत किया गया। कल हम जो बातें कर रहे थे कि रामजी लक्ष्मणजी को श्रोता बनाकर काम का दर्शन पेश कर रहे थे। उसके बाद जो कथा है उसमें राम-लखन फिर आगे बढ़ते हैं और भगवान राम-लक्ष्मण दोनों पंपा सरोवर के तट आते हैं। नारदजी आते हैं। नारदजी प्रभु से मांगते है,'प्रभु! आप की भक्ति पूर्णिमा की रात्रि है। और पूर्णिमा की रात्रि में चांद होता है पूर्ण। और आप का नाम रामचंद्र है। भक्त के हृदयरूपी आकाश में आप की भक्ति की चांदनी हो और आप का रामनाम पूर्णिमा का चंद्र है; दूसरे नाम का मैं अनादर न करूं, मेरे हृदयरूपी आकाश में आप का रामनाम चंद्र की भांति निवास करे।' नारद ने पहले रामनाम लिया। देखो, ये क्रम देखो। अब पूरा विषय बदलते हैं। परमात्मा को बहुत प्रसन्न देखकर नारदजी मृदुबानी में बोले, 'हे प्रभु, आप की माया की प्रबलता ने जब मुझ पर हमला किया तब मेरी इच्छा हो गई कि मैं ब्याह करूं तब आप ने मुझे शादी क्यों करने नहीं दी?' रामजी उत्तर देते हैं, 'नारद, मैं हर्ष में कहता हूं, रोष में नहीं कहता कि मेरे दो प्रकार के संतान है, एक बालक और एक प्रौढ़। जब तक वो बालक है तो कभी नासमझ में अग्नि को पकड़ने के लिए

जाता है तब माँ उसे रोकती है। जिसको मेरा भरोसा है ऐसा भक्त मेरा बालक है और वो कहीं नासमझी करने लगे तो माँ की तरह मैं रोकता हूं। लेकिन ज्ञानी लोग जो है वो मेरे जुवान बच्चे हैं, उसको भी मैं प्रेम तो करता हूं।

तुलसी का कामदर्शन; ज्ञानी मेरे प्रौढ़ पुत्र की तरह है, प्रभु कहते हैं कि मैं ज्ञानी से भी प्यार करता हूं। लेकिन बड़ा हुआ लड़का सांप को पकड़ने जाए, आग में हाथ ड़ालने जाए फिर मैं नहीं रोकता वहां, क्योंकि वो समझदार था। मेरा भक्त होता है उसे मेरा बल होता है, ज्ञानीओं का अपना बल होता है। लेकिन दोनों को परेशान करनेवाला काम-क्रोध है। मेरे आश्रय में रहता है उसे मैं बचा लेता हूं और ज्ञानी जब भूल करता है तब जिम्मेवारी उसकी रहती है; प्रेम तो मैं करता हूं। कामदर्शन में गोस्वामीजी आगे कहते हैं-

काम क्रोध लोभादि मद प्रबल मोह कै धारि ।
तिन्ह महँ अति दारुन दुखद मायारूपी नारि ।।

यहां समझने के लिए भाषांतर नहीं चलेगा, गुरु की जरूरत पड़ेगी। जिस संत की पहली गुरु महिला है, जिस संत का पहला गुरु काम है वो कभी कह सकता है कि 'तिन्ह महँ अति दारुन दुखद।' वो कभी कह सकता है कि भयंकर दु:ख देनेवाली स्त्री है? स्त्री की आलोचना होगी। लेकिन तुलसी एक शब्द जो बीच में रख देते हैं 'मायारूपी नारि।' यहां नारी मानी हर मातृशरीर की बात नहीं है, मायारूपी जो है। स्त्री मायारूपेण भी है, छायारूपेण भी है, कायारूपेण भी है। मेरे सद्गुरु भगवान ने मुझे समझाया था कि यहां 'मायारूपी नारि' का अर्थ करना, माया जो नारी है। हरेक नारी दु:खद नहीं है, मायावी नारी; जैसे मायावी पुरुष दु:खद होना चाहिए। एक नई संहिता निकलनी चाहिए जिसमें पत्नीव्रता पुरुष के धर्म दिखाने चाहिए। ये पक्ष क्यों अनछुआ रहा है? जिम्मेवार दोनों है। तुलसी का अनोख़ा कामदर्शन है; ठीक से समझ में आए तो जगा देता है। तो, जो नारी की लोगों को बहुधा आलोचना लगती है, मेरी अंत:करण की प्रवृत्ति मुझे रोकती है कि जो आदमी का प्रथम गुरु एक नारी है वो इस गुरु की आलोचना नहीं कर सकता, वो माया की आलोचना कर रहा है।

सुनु मुनि कह पुरान श्रुति संता ।
मोह बिपिन कहुँ नारि बसंता ।।

फिर पूरा कामदर्शन चलता है। अन्याय हो जाएगा यदि एक मातृशरीर को ही केन्द्र में रखा तो! तुलसी ये नहीं कर सकते मेरी समझ में। तो, एक विशिष्टरूप में कामदर्शन गोस्वामीजी प्रस्तुत करते हैं। स्त्रीस्वरूपा माया बहुत दु:ख देती है, नारद! विश्वमोहिनी स्त्री नहीं थी लेकिन माया स्त्री हुई थी। वो स्त्री की माया नहीं थी ये माया स्त्री थी। 'बालकांड' का प्रसंग है, आप जानते हैं कि वो एक मायावी नगर में स्वयं माया विश्वमोहिनी है।

तो, बाप! बहुत सूत्र है यहां; छओ ऋतुओं का वर्णन है। माया बिलग-बिलग ऋतुओं में बड़ी दु:ख देती है। उसकी चर्चा कुछ कल करूंगा। लेकिन 'अरण्यकांड' के अंत में राम के मुख में नारद के पास काम का एक अद्भुत दर्शन प्रस्तुत किया गया। न काम के बश में होना, न किसी को बश करना, बस, राम भजते-भजते 'बस।'

मुझे राजभैया ने 'फ़राज'साहब के कुछ शे'र दिए है-

उससे पहले कि वो बेवफ़ा हो जाए,
क्यों न ये दोस्त हम जुदा हो जाए?
बंदगी हमने छोड़ दी है 'फ़राज',
क्या करे लोग जब खुदा हो जाए ।

तो बाप, पहले भज लिया जाए। जो कुछ मिनटें बची है उसमें कथा का थोड़ा क्रम। कल हम सब ने

मिलकर भगवान राम के प्रागट्य का आनंद लिया। माँ कौशल्या के साथ अन्य दो रानियों ने भी पुत्रों को जनम दिया। अयोध्या उत्सव में डूबी है। चारों भाई बड़े होने लगे हैं। नामकरण का समय आता है। वसिष्ठजी ने कौशल्यानंदन का नाम 'राम' रखा; वो अखिल लोक को विश्रामदायक है। कैकेयीपुत्र,जो विश्वभरणपोषण करनेवाला है उसका नाम 'भरत' रखा। जिसके नाममात्र से शत्रु नहीं, शत्रुता मिटेगी उसका नाम 'शत्रुघ्न' रखा। 'लच्छन धाम राम प्रिय सकल जगत आधार', ऐसे 'लक्ष्मण'नाम रखा। चारों भाई कुमार हुए। माता-पिता गुरु को बुलाकर यज्ञोपवित-संस्कार कराते हैं। बाद में रामजी गुरु के द्वार विद्या प्राप्त करने के लिए गए। गोस्वामीजी कहते हैं, जिसके श्वासोश्वास में चारों श्रुतियां हो वो पढ़े वो तो कौतुक है! लेकिन विश्व को सिखाया, ब्रह्म होते हुए भी किसी गुरु के शरण में मैं जाता हूं; गुरु की महिमा बताई। अल्पकाल में विद्या प्राप्त करते हैं।

गोस्वामीजी प्रसंग को बदलते हैं। विश्वामित्र पधारे। राम-लक्ष्मण की मांग की। दशरथजी शुरू में तो मना कर देते हैं लेकिन गुरु के कहने पर सोंप देते हैं। मुझे इतना ही समझ में आता है कि भारत का ऋषि संपत्ति नहीं मांगता, यज्ञरक्षा-धर्मरक्षा के लिए संतति की मांग करता है। विश्वामित्र के संग राम-लक्ष्मण दोनों जा रहे हैं। श्याम और गौर दोनों भाईओं को प्राप्त करके विश्वामित्रजी को मानो महानिधि प्राप्त हुई। गुरु की महानिधि क्या? योग्य आश्रित। विश्वामित्र ने ताडका को दिखाई; प्रभु ने एक ही बान से प्राण हर लिया। दूसरे दिन प्रभु विश्वामित्र को यज्ञ आरंभ करने को पूछते हैं। यज्ञ का आरंभ हुआ। मारीच दौड़ आया। बिना फने के बान से सतजोजन फेंक दिया। सुबाहु को अग्निबान से निर्वाण दिया। और प्रभु ने विश्वामित्र के यज्ञ को पूरा किया।

एक दिन विश्वामित्र ने कहा, 'राघव, मेरा यज्ञ तो आपने पूर्ण करवा दिया, लेकिन अभी दो यज्ञ बाकी है, इसलिए मैं आप को लिए चलूं जनकपुर?' और धनुषयज्ञ की बात सुनते ही प्रभु विश्वामित्र के साथ जनकपुर की यात्रा करने के लिए राजी होते हैं। यात्रा दरम्यान अहल्या का उद्धार करते हैं; गंगा में स्नान करते हैं; और प्रभु जनकपुर पहुंचते हैं। जनकराज स्वागत करते-करते स्तंभित हो गए! राजा राम के रूप में लुब्ध होते हैं। 'सुंदरसदन' में जनकजी ने दोनों को और विश्वामित्र को ठहराया।

गुरुकृपा हो जाए, रामभजन बढ़े, तो काम के बश में नहीं होना है और काम को बश करना भी नहीं है। बश करने से ये काबू में आनेवाला नहीं है। कुछ औषधि के रूप में प्रयोग है लेकिन फिर डर तो रहता ही है। न काम को बश करे, न काम के बश में हो जाए, गुरुकृपा से भजन करते-करते 'बस' करे, रुक जाए; जागृति से 'बस' करे। और शरीर की रचना ऐसी है; शरीर सीखा देता है; शरीर गुरु है। ये रामकथा सब को लाभ देती है। जो विषयीलोग है उसको मनोरंजन देती है; साधक लोग है उसको विश्राम देती है; सिद्ध को अमृतपान कराती है। 'मानस' का कामदर्शन हमें निर्दंभ बनाने का एक कीमिया है; औषधि भी है; उपाय भी।

मानस-कामदर्शन-८

काम को शिव जलाते हैं, नारद जीतते हैं और राम नचाते हैं

तुलसी के 'रामचरित मानस' अंतर्गत जो कुछ कामदर्शन प्रस्तुत किया गया उसकी सात्त्विक-तात्त्विक चर्चा हम मिलकर कर रहे हैं। कल की एक बात आप जरूर याद रखिएगा और फिर जीवन में ठीक लगे तो उसके बारे में ओर सोचना और चलना भी कि हम जैसों के लिए काम को बश नहीं करना है; एक अर्थ में ये हमारे बश की बात नहीं है। दूसरी बात, हमें काम के बश में होना नहीं है, ये भी करीब-करीब हमारे बश की बात नहीं है। लेकिन सत्संग करते- करते, सत्संग से प्राप्य विवेक से अपने चिंतन से बहुत समझदारी से हम 'बस' करना सीखें। अब मैं आप के पास 'मानस' के चंद पात्रों को रखते हुए कुछ कहना चाहूंगा। भगवान शिव ने काम को जला दिया ये सत्य घटना है।

तब सिवँ तीसर नयन उघारा ।
चितवत कामु भयउ जरि छारा ।।

ये पंक्ति कहती है कि भगवान शिव ने अपना जो तीसरा अग्निवाला नेत्र है उसमें काम को जलाकर राख कर दिया! लेकिन आगे का दर्शन लिखा नहीं है। कथा तो ऐसी है कि फिर उसी भस्म शिवजी ने अंग पर लपेटी है। शिव चिताभस्म का लेपन करते हैं ये हम जानते हैं। तो, एक बात ये समझें मेरे भाई-बहन कि शिव ने काम को जलाया; यूं कहे कि वश कर लिया। अब काम शिवजी को कुछ कर नहीं सकता।

दूसरा एक पात्र है 'मानस' का, देवर्षि नारद। वहां काम को जलाया नहीं गया, काम को जीता गया। ये भी इतना ही सत्य है। वहां पूज्यपाद गोस्वामीजी ने पंक्ति लिखी है, 'जिता काम अहमिति मन माहीं।' जीता; शिव ने जलाया, नारद ने जीता। तीसरी एक घटना है 'मानस' में कि भगवान राम ने काम को जलाया नहीं, जीता भी नहीं, नचाया।

जेहि तुरंग पर रामु बिराजे ।
गति बिलोकि खगनायकु लाजे ।।

घोड़ा बनाया और घोड़े को दुल्हे के रूप में ठाकुर बैठकर काम को नचाते हैं।

तो, काम को शिव जलाते हैं; नारद जीतते हैं; राम नचाते हैं। हमारा आदर्श कौन बनेगा इन तीनों में से? मैं शब्दप्रयोग करूं, हम 'गरीब' है। गरीब मिन्स बस्तु के अभाव के कारण गरीब नहीं, हम सब इन्द्रियों के गुलाम होने के कारण गरीब है। हम गरीब है विकारों के कारण। कुछ ऐसे दृश्य देखने नहीं है लेकिन मन फूसलाता है कि भई, तेरा

क्या बिगड़ जाएगा, एक बार देख ले ना! इससे बातचीत करने की जरूरत नहीं है, लेकिन मन हमारी बोलने की वाचा इन्द्रिय को दबाव ड़ालता है कि बोल, बोल। लगे कि भई, ऐसी बातें न सुने, तब मन कान को प्रेरित करता है कि भई, सुन तो ले; और गरीब श्रवणेन्द्रिय बलवान मन के दबाव में आ जाती है। खानदानी, शालीनता और कुलपरंपरा मना करे तब फिर ये इन्द्रियां गरीब होने के कारण उसी क्षेत्र में विचरती है।

तो, मैं आप से बात करना चाहता हूं कि काम को राम नचाते हैं, शिव जलाते हैं, नारदजी जीतते हैं; इसमें हमारा आदर्श कौन हो सकता है? हम नचा पाएंगे तो राम आदर्श; जीत पाए तो नारद आदर्श; जला पाए तो शिव आदर्श। किस मारग पर जाए? त्रिपथ है। मैं संवाद के सूर में पूछ रहा हूं, आप इनमें से कौन मारग निश्चित करेंगे? 'मानस' में एक चौपाई से आप सुपरिचित है-

नारि बिबस नर सकल गोसाई ।
नाचहिं नट मर्कट की नाई ।।

अब, बाबा तुलसीजी ने तो लिखा कि नारी सब नर को नचाती है, जैसे बंदर को उसका नट नचाता है। लेकिन सदैव एक पक्ष की ही बात हुई है, पुरुष भी तो कोई कम नहीं है! 'यूझ एन्ड थ्रो' पुरुष का खेल होता है! यहां कुछ बेलेन्स नहीं हुआ है। नारी को बहुत डांटा गया है। जैसे कल भी कहा गया; लेकिन वहां संदर्भ था मायारूपी नारी का। 'मानस' में मायारूपी नारी है शूर्पणखा। नाक-कान काटे गए मिन्स वहां ही उसकी नाक कट गई। भगवान बहुत करुणावान है। करुणावान ही नहीं, राम की करुणा

बहुत कोमल है। 'लंकाकांड' में कभी इन्द्र की स्तुति पढ़ लीजिए। देवराज इन्द्र ने प्रभु की स्तुति की है। वो कहता है, वेद-शास्त्र में जो अव्यक्त है, निर्गुण है वो ही राम; आप का सगुणरूप मुझे भाने लगा है। और फिर मांगता है, मुझे आप का दास समझकर भक्ति का दान दो। बड़ा सीखने जैसा छंद है-

दे भक्ति रमानिवास त्रास हरन सरन सुखदायकं ।
सुर बृंद रंजन द्वंद्व भंजन मनुजतनु अतुलितबलं ।

करुणा है जिसकी कोमल, कठोर नहीं। इन्द्र बड़ा कठोर है लेकिन कहता है, 'करुना कोमलं।' भगवान की यहां कोमल करुणा काम कर रही है। तो, मेरे भाई-बहन, पुरुष भी नचाता है, नारी भी नचाती है। कला के माध्यम से एक-दूसरे एक-दूसरे को नचाए तो स्वागत है। एक पत्नी गाए और उनका पति सही स्थान पर दाद दे, ये कला के द्वारा पति नाच रहा है। कहीं एक पुरुष नृत्य करता है और उसकी पत्नी 'वाह-वाह' करती है, ये एक-दूसरों को नचाना है; वहां काम नहीं है। कला नचाए वो अच्छा है।

तो, काम को नचाना, जीतना, जलाना। काम नाचेगा, जरूर नाचेगा। साधक नचा सकता है। लेकिन एक तो काम की सवारी कठिन है। जिसको काम की सवारी का अंदाज़ नहीं है, जो घोड़े पर बैठा नहीं है, वो घोड़े को नचा नहीं सकता। सवार कुशल होना चाहिए। भगवान राम जैसा सवार हो और काम को घोड़ा बनाकर ये तरल तुरंग नाचता हो ये बात ओर है। हम राम नहीं है कि काम को नचा पाए; इरादा अच्छा है, आदर्श बनाना अच्छा है; लेकिन काम को नचाने के लिए शायद हम राम न बन पाए। लेकिन मैं जिस पर दृढ़ हूं वो तो हम कर सकते हैं, क्रमशः रामभजन बढ़ाएं। आदर्श मानना अच्छा है लेकिन केवल बोलने से तो कोई घटना नहीं घटती; हमारे अनुभव में बात आए। अपनी-अपनी कक्षा से कोई नचाए, कोई जीते, कोई जलाए। हम क्या करें?

मेरा मानना है कि ये जलाना, जीतना, नचाना जो कर सके उसके चरणों में मेरा प्रणाम लेकिन हम जलाए ना, जीते ना, नचाए ना, एक डिस्टन्स बनाकर हम रस लें, रस लें। कोई नृत्य करता है, हम केवल एक पवित्र डिस्टन्स बनाकर उसका रस लें। कोई काम की समस्त विकृतिओं को जला दे वो जरा आक्रमकता है लेकिन काम के जलाने के बाद क्या हो सकता है उसको जरा रस से देखे, एक पवित्र डिस्टन्स बनाकर। हम काम को जीत नहीं पाए लेकिन जितनेवालों से एक प्रकार की पवित्र दूरी बनाकर रस लें। जीवन का अनुभव तो ऐसा लगता है कि ये काम जब मन में होता है तब परिपक्व मनवाला काम को जला सकता है, शंकर का मन। जिसका मन प्रौढ़ हो वो काम को जला सकता है; जिसका मन विमल हो वो काम को जीत सकता है; जिसका मन रामवृत्तिओं से भरपूर है वो काम को नचा सकता है। लेकिन तीनों जगह एक खतरा है कि ये काम जब तक मन में रहे तब तक अच्छा है। जब काम केन्द्र बदलता है, बुद्धि में जाता है तब जलनेवाला काम, जीता गया काम , नचाया गया काम वो बुद्धि में जाकर रस की सृष्टि नहीं कर सकता, जीवन को जड़ बना देता है।

अहल्या के प्रकरण से ये अनुभव होता है कि अहल्या की भूल है कि इन्द्र की भूल है उसमें न जाए; प्रत्येक मन में काम होता है, इस सत्य को हम अनदेखा न करें। अहल्या एक विश्व की बहुत सुंदर रचना है उस समय की। उसके मन में काम रहता तब तक कोई चिंता नहीं थी लेकिन उसका काम बुद्धि में गया। मन सोचता है, बुद्धि निर्णय देती है। इतना सोचती अहल्या कि जिस समय पर मेरे पास काम की मांग की जाती है, मेरे पति के रूप में आकर, ये समय क्रीड़ा के योग्य है कि नहीं? न

पहचान पाई अहल्या। लगता है मेरी व्यासपीठ को काम मन से निकलकर बुद्धि में पहुंच गया अहल्या में; बुद्धि ने महोर मार दी। उसी समय काम जब मन से निकलकर बुद्धि में जाता है तो बुद्धि को जड़ कर देता है। मैं कहूंगा कि इन्द्र की बुद्धि भी जड़ हो गई। इस जड़ता को तो शायद क्या दंड़ मिलता ख़बर नहीं, लेकिन वो इन्द्र बड़ा चालाक है। भागा, फिर पकड़ा गया; दंड़ित हुआ। नारद ने काम को जीता लेकिन उसका काम अहंकार में चला गया, 'जिता काम अहमिति मन माहीं', ये तुलसीदासजी का बड़ा सूक्ष्म रहस्यपूर्ण दर्शन है।

काम प्रगट तो होता है मन से लेकिन केन्द्र बदलता है। और जब दूसरे स्थान में जाता है तब मनमानी करने लगता है। बाप के साथ बेटा एक घर में रहेगा तो बाप राम की छाया में बेटा काम कम भूल करेगा। रहने दो दोनों को हृदय में। ईश्वर निकालना नहीं चाहता लेकिन हमारे हृदय में काम और राम ही नहीं रहते, कुछ ओर लोग भी निवास करते हैं! और मैं तो निवेदन करूं कि बाप रहे, बेटा भी रहे और इस कामरूपी बेटा का ब्याह भी जल्द कर दो कि बाप के साथ प्रभुपद रति भी रहे। रति भी बहू बनकर आ जाए। और अक्सर देख़िएगा, जिस घर में ओर कोई मातृशरीर न हो वो घर भी ज्यादा व्यवस्थित नहीं होता, अस्तव्यस्त होता है। वहां बेटे की पत्नी भी होती तो? सब ठीक रख़ती। मेरे भाई-बहन, काम और राम दोनों को हृदय में रहने दो लेकिन रतिरूपी पुत्रवधू को भी आदर देकर रख़ो। रति दोनों को एक-दूसरों से जोड़ती है। रति एक रस है; तुलसी ने रति को रस कहा। जीतना, जलाना, नचाना, जो कर सके उसे मुबारक; लेकिन-

हरिपद रति रस बेद बखाना।

रति है वो रस है, इसलिए मैं कहता हूं कि कोई नृत्य करे तो उसे तुम नचा नहीं रहे हैं, तुम इतना ही अधिकारी हो कि तुम विशुद्ध मन से नृत्य का रस लो। हम क्यों नृत्य देखते हैं? क्योंकि हम किसीको नचाना नहीं चाहते, हम रस लेते हैं, एक डिस्टन्स रखते हुए। ये भूल भी नहीं है और अपराध भी नहीं है। रस से जीओ। रामकथा क्यों है? केवल रस की सृष्टि है। कथा मोक्ष दे दे तो मैं राजी लेकिन न दे तो मुझे ख़बर नहीं, मुझे चाहिए नहीं; रस दे। तुलसी ने रस दिया है 'मानस' में-

गावत बेद पुरान अष्टदस ।
छओ सास्त्र सब ग्रंथन को रस ।।

बहुत सीधा-सादा हमारा रोजिंदा अनुभव। ख़ाना भोग है, पीना रस है। आप कभी मानवकिताबों को देखो। आदमी खाता हो तब देखना और आदमी पीता हो तब देखना। आदमी खाता हो तब ये आक्रमक है; इनमें लोभी खाने बैठेगा तब तो भयंकर आक्रमक होता है! लेकिन बहुधा कोई रस पीएगा तो उसमें आक्रमकता नहीं होती, घूंट-घूंटकर पीएगा। रस भोग नहीं है, रस पीना है; जैसे रामरस, प्रेमरस, कलारस, विद्यारस। रस होना चाहिए। इसीलिए रस की महिमा गोस्वामीजी ने की। परमात्मा के चरणों में रस, इसी रसरूपा रति की मांग भरतजी करते हैं-

सीता राम चरन रति मोरें ।
अनुदिन बढ़उ अनुग्रह तोरें ।।

बाप अपने बेटे का ब्याह कर दे और तीनों एक घर में रहे। रति के कारण घर का वातावरण रसरूप रहेगा। बाप यदि अपने घर से बेटे को निकाल दे तो बाप की आक्रमकता से हो सकता है कि पहले नियंत्रित था वो अब अनियंत्रित बेटा दूसरी जगह रहने गया और कोई नियंत्रण नहीं रहा, वो बेटा कहीं भी भटक सकता है। हम कहे कि हमारे मन से काम निकल जाए; यही काम यहां से निकलकर फिर बुद्धि में चला जाएगा तो ज़डता आने में देर नहीं लगेगी। या तो बुद्धि जड़ बन जाती है या तो अति चंचल बन जाती है।

अब, चलो कि काम बुद्धि में गया, उच्छृंखल हो गया, बुद्धि ने कबूल कर लिया कि काम बराबर है, विवेक छोड़ दिया बुद्धि ने; तब कोई समझाए कि तेरा बाप वहां बैठा है और तू यहां बैठा ये क्या कर रहा है? ये ठीक नहीं है, यहां तू घर क्या रख़ता है? घर बदल ले। और फिर काम को समझा-बुझाकर कोई चित्त के भवन में पहुंचा दे, कोई गुरु मिल जाए। चित्त में जाकर काम थोड़ा चिंतन करेगा, चिंतनशील हो जाएगा; अच्छा है। चित्त का नाम है 'रामचरित मानस' में विष्णु; मन का नाम है 'मानस' में चंद्रमा; बुद्धि का नाम है 'मानस' में ब्रह्मा। और अहंकार का नाम है 'मानस' में शंकर। चित्त में काम जाएगा तो योगसूत्र के अनुसार 'योग: चित्तवृत्ति निरोध:।' काम की ऊर्जा वहां नियंत्रित होगी। तुलसीदासजी मन को भी बोध देते हैं, बुद्धि को भी बोध देते हैं, वैसे चित्त को भी बोध देते हैं कि हे चित्त, अब चित्रकूट चल। क्योंकि तुलसीदासजी को पता है कि चित्रकूट एक औषधि है। और मैं यही कहना चाहूंगा कि जो भौगोलिक चित्रकूट है उसकी तो अतुलनीय महिमा है लेकिन एक बस्तु याद रख़ो कि निष्ठा का प्रश्न आए तब आप किसी महापुरुष के चरण में निष्ठा रख़ते हो, तो अपने बुद्धपुरुष के पास जाना, चित्रकूट ही जाना। अब चित्रकूट में जो परिभाषा जहां लागू पडती होती हो वो देश, काल, व्यक्ति-उसको आप चित्रकूट कह सकते हैं।

अब मैं आप से बात करूं। चित्रकूट में क्या है? सुंदरवन है, कामद वन। चार लक्षण तुलसीदासजी ने चित्रकूट के बताए है- मंदाकिनी, चित्रकूट, कामदवन, सुंदरवन। ये चार लक्षण किसी विशेष स्थान में, व्यक्ति में, विचार में आप को मिले तो आप चित्रकूट गए हैं। आप के घर में ये चार लक्षण हो तो आप चित्रकूट में ही बस रहे हैं। चार लक्षण-

रामकथा मंदाकिनी चित्रकूट चित्त चारु ।
तुलसी सुभग सनेह बन सिय रघुबीर बिहारु ।।

ये पूर्णत: चित्रकूट की व्याख्या है। वहां मंदाकिनी, पहाड़, वन, राम-सीता का निरंतर विहार है। लेकिन भावजगत में जहां हम महसूस करे कि जहां रामकथा की मंदाकिनी बहती हो,' रामायण' का पाठ होता हो, आप के घर में रामकथा की तरंगें बहती हो, वो चित्रकूट का एक लक्षण आप पूरा करते हैं। और मुझे बहुत खुशी है कि देश-विदेश में करीब-करीब जो व्यासपीठ के निकट आ गए इनमें से किसी का घर 'रामचरित मानस' से ख़ाली नहीं है। आप के पास कोई भी आप का इष्टग्रंथ हो, वो आप के पास है, और उसका पाठ या गान करे तब मंदाकिनी बह रही है। तो, 'रामचरित मानस' का ग्रंथ जिसके पास हो वहां चित्रकूट का एक चौथा भाग है।

दूसरा, 'चित्रकूट चित्त चारु।' जब तक हमारा चित्त चारु मानी सुंदर, जिसमें कोई विक्षेप नहीं है, जितने भूतकाल के चित्र हमने संग्रहित किए थे वो हमने डिलिट कर लिए, ऐसा जिसका पवित्र चित्त; घर में, व्यक्ति में, प्रसंग में जिसका चित्त ऐसा प्रशांत, पवित्र और प्रसन्न है, तो आप के पास आधा चित्रकूट है।

'तुलसी सुभग सनेह बन', आप के घर में स्नेह का वातावरण हो, परस्पर सब के साथ स्नेह हो। स्नेहमय घर का वातावरण चित्रकूट है। और 'सिय रघुबीर बिहारु।' जिस घर में राम हो, हराम न हो; सीता हो, चिंता न हो उस राम और जानकी, ऐसा वातावरण जहां हो वो चित्रकूट है। सीधी-सी बात है, ये हम कर सके ऐसी बात है। तुलसी ने बताये ये चार लक्षण यदि हम अर्जित कर सके तो हम स्वयं चित्रकूट बन सकते हैं। स्नेह

हो, चित्त पवित्र हो, रामचरित का गायन हो और घर में राम घूमता हो।

प्रश्न है, ''बापू, आपने कल कहा कि किसीको सुधारने का मैंने ठेका नहीं लिया है। सत्य तो ये है कि आपने किसीको सुधारने का नहीं, सभी को बिगाड़ने का ठेका जरूर लिया है!'' दूध में खटाई ड़ालो तो दुनिया की दृष्टि में दूध बिगड़ गया, लेकिन सुबह तक प्रतीक्षा करो तो दहीं बन गया और फिर कोई मथे तो मक्खन हो गया और मक्खन को कोई ताव दे तो घी बन गया; घी कोई दीपक में डालो और बाती लगा लो तो दीपक हो गया; दीपक हो गया तो घर में उजाला हो गया। ये बिगड़ना आख़िर में प्रकाश का उपक्रम है। घर में अपना कर्तव्य का ध्यान रख़ते हुए कथा सुनी जाए। ''और सुनो बापू, आपका स्टेटमेन्ट है कि मैं बिगड़ ना जाऊं इसलिए कथा गाता हूं। सत्य तो ये है कि बापू, तुम पूरे के पूरे बिगड़ चुके हो!'' आप क्या कहोगे? हम खुद कह देते हैं-

हमने कह तो दिया हम बुरे लोग है।
अब तो यकीं हो गया हम बुरे लोग है ।

बच्चे को बहुत गहरी निंद आ रही है और समयसर स्कूल भेजने के लिए माँ उसको बार-बार जगाती है तब कुछ क्षणों के लिए बच्चे को माँ बुरी लगती है। वैसे हम सतत बेहोशी में जीने के आदती हो चुके हैं, इसमें कभी चूटकी लेकर, आवाज़ देकर, कभी प्यार से जब जागने की कोशिश होती है तो कुछ समय जो मूर्छित रहना पसंद करते हैं उसे बुरा लगेगा। अध्यात्ममार्ग एक ऐसा मार्ग है कि समझ में नहीं आता। कम से कम आप को ये पता लग गया कि हम बिगड़ चुके हैं। जब आदमी को पता लगता है कि हम बिगड़ गए हैं तब सुधरने का आरंभ हो सकता है। लेकिन हम बिगड़े होते हुए कबूल ही नहीं करे कि हम बिगड़े हुए हैं तब सुधरने का कोई चान्स नहीं है।

लोग मुझे पूछते हैं, 'बापू, माला रख़ने की जरूरत है?' ये तुम्हारे स्वभाव में हो तो रख़ो, लेकिन माला रख़ने का एक फायदा बताऊं? आप के पास मोबाईल होगा ना तो कोई न होगा तो भी किसी को मिलाने को जी हो जाएगा; माला रख़ोगे तो हेतु कोई नहीं लेकिन हरि को लगाने की ईच्छा हो जाएगी। बहुत आनंद है हरिभजन में, जिन्हों ने लिया है उन लोगों की ये बात है। आप कभी किसी धूने में थोड़ा-सा गुगल ड़ालो, इतना छोटा-सा ड़ालो, खुश्बू घर को महका देगी; वैसे जीवन के अवसर में प्यार से एक हरिनाम का कण ड़ाला जाए तो अंत:करण खुश्बू से भर सकता है। कोई बुद्धपुरुष कहीं पांच दिन-दस दिन ठहरे, तो वो जगह यदि सार्वजनिक हो तो प्रयोग के रूप में भी उसके जाने के बाद वहीं आप पांच दिन ठहरो, पता लगेगा भजन का करिश्मा क्या होता है!

तो, बाप! रति और रस की प्रधानता तुलसी के कामदर्शन में रही। अब क्रमश: एक आगे के दर्शन में, वहां भी काम का संकेत है; भगवान जनकपुर में 'सुंदरसदन' में ठहरे हैं, विश्वामित्र के संग। सायंकाल गुरुआज्ञा लेकर दोनों भाई नगरदर्शन के लिए निकलते हैं। जनकपुर रामदर्शन के लिए उमड़ा है। राम और लखन जब जनकपुर के दर्शन के लिए निकले हैं, प्रत्येक व्यक्ति की एक चाह शुरू हुई। तो, बच्चे भगवान को छूकर अपने भवन में ले जाते थे; मिल पाते थे अपने बुज़ुर्गो से। मिथिला की महिलाएं झरोख़े से देखती थी; उपर से फूल बरसाती थी। फूल चढ़ाना हरि को अपनी ओर निगाह करने का निमंत्रण है। ऐसे भगवान राम नगरदर्शन कर लेते हैं। दोनों भाईओं ने संध्या-पूजा की। पहला रात्रिमुकाम जनकपुर में ऐसे हुआ।

सुबह हुई; अपना नित्यकर्म करते गुरुदेव की पूजा के लिए दोनों भाई जनकवाटिका के बाग में पुष्प लेने के लिए जाते हैं। उसी समय रामकथा में जानकीजी

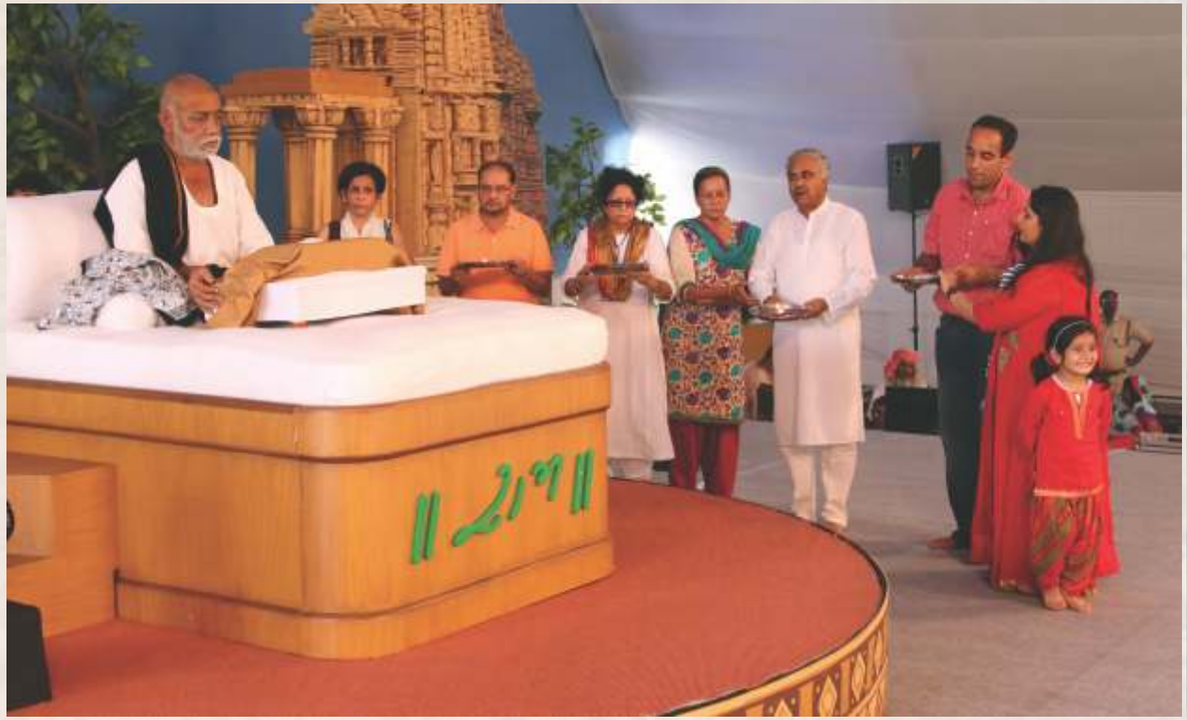

का प्रवेश तुलसीजी कराते हैं। अष्टसखीओं के साथ जानकी गौरीपूजा के लिए बाग में आती है। भाव में डूबी सखी गौरीमंदिर में आकर जानकीजी से कहती है, 'जानकी, गौरीपूजा बाद में भी होगी। वो राजकुमार जिसकी चर्चा पूरी नगरी में है, वो बाग में आए हैं; चल देख लो।' जानकी के मनोभाव खुलने लगे हैं। प्रिय सखी को आगे की और जानकीजी उनके पीछे-पीछे चलती है। और जानकीजी जा रही है रामदर्शन के लिए; तब गोस्वामीजी बड़ा प्यारा शृंगाररस से पूरा प्रसंग आलेखित करते हैं। गोस्वामीजी लिखते हैं-

कंकन किंकिनि नूपुर धुनि सुनि ।
कहत लखन सन रामु हृदयँ गुनि ।।
मानहुँ मदन दुंदुभी दीन्हीं ।
मनसा बिस्व बिजय कहँ कीन्हीं ।।

सीताजी चल रही है। पैरों के नूपुर, हाथ के कंगन, कटिभाग का करधनी-ये तीनों की आवाज़ आ रही है। और गोस्वामीजी कहते हैं, ये तीन प्रकार के सीयाजू के आभूषण, आज लगता है, मानो कामदेव ने दुंदुभि पर एकदम उसकी आवाज़ प्रगट की! कामदेव ने सोचा कि आज राम-लक्ष्मण दोनों फूल लेने आए हैं। हाथ में धनुषबान नहीं है, धनुषबान होता तो उनको क्षुभित करना मुश्किल। इसलिए भगवान राम के मनरूपी विश्व पर विजय करने के लिए कामदेव आया। अद्‌भुत बाग है! शरद काल है। सुबह की धूप मीठी-मीठी और मंद-सुगंध वायु। भगवान राम ने ये आवाज़ सुनी; ईधर-उधर देखने लगे। देखते-देखते जानकी को देखा। प्रभु देख रहे हैं। और सीयाजु को देखते ही लखन का हाथ पकड़ा, ''लखन, देख, ये जनककन्या जानकी है और इसके

कारण धनुषयज्ञ हो रहा है।'' एक ज्येष्ठ बंधु छोटे भाई से इतनी खूलकर बातें कर रहे हैं, दंभ नहीं है। वहां तक ठाकुर बोलने लगे-

जासु बिलोकी अलौकिक सोभा ।
सहज पुनीत मोर मनु छोभा ।।

रस के लिए मन चाहिए। बुद्धि में जाने की जरूरत नहीं। जो बहुत बुद्धिपूर्वक सोचेगा वो रस नहीं ले पाएगा। बुद्धि की निरंतर हाजरी हमें रस से दूर कर देती है। कुछ धर्म ने ज़ंज़ीरें ड़ाली कि रस मत लो! भारतीय धर्म तो उदार है। ये उत्सव का देश है। रामजी कहते हैं, मेरा मन क्षोभ महसूस करता है। ईश्वर काम का जीवनसत्य उद्घोषित करते हैं। हम क्यों दंभी बन बैठे हैं? रस के प्रति सहज पुनित भाव से आकर्षित होना अपराध नहीं है।

तो बाप! प्रभु सुंदर शृंगार का वर्णन कर रहे हैं। यहां लक्ष्मणजी लताभवन के पर्दे को हटाकर, पूजारी पर्दा हटाए और ठाकुरजी का दर्शन खूला करे वैसे रामजी को ले आए। यहां से जानकी आई। दोनों आमने-सामने है। लेकिन देखो, राम जानकी को देखते हैं और सीयाजु नीचे देख जाती है। और सीयाजु राम को देखे तो राम, लखन के साथ बात करने लगते हैं। आज थोपी हुई मर्यादा नहीं थी, आज जन्मजात मर्यादा थी। मातृशरीर पर लज्जा लादी नहीं जानी चाहिए, लज्जा उनका स्वभाव है। जमाने की शिकारी वृत्ति ने कुछ करने को माताओं को मज़बूर कर दिया है।

जानकीजी अपने नेत्रों के द्वार से राम की छबि को अंदर उतारती है। अंदर राम को लेकर आंख का किवाड़ बंद कर दिया, क्योंकि अंदर आया अतिथि चला न जाए। और यहां भगवान राम ने परम प्रेममय सुकोमल शाही बनाई और इस शाही में से भगवान राम अपनी चित्त की दीवार पर जानकीजी का चित्र अंकित कर रहे हैं। सीयाजु सख़ीओं के संग गौरीमंदिर में आती है। सीयाजु ने भवानी की स्तुति की; प्रेमवश भवानी की मूर्ति बोली; हंसी; माला का प्रसाद जानकीजी को दिया। आदमी का विशुद्ध प्रेम मूर्ति को बुलवा सकता है। उसकी बोली सुनने के लिए थोड़े कान बदलने पड़ते हैं। लेकिन ये आध्यात्मिक सत्य है। मूर्ति बोली; भवानी ने आशीर्वाद दिया, 'सीया, तेरे मन में जो सांवरा बैठ गया है वो तुम्हें मिलेगा।' माँ गौरी के आशीर्वाद सुनकर जानकी बहुत आनंद से भर गई। सखीओं के संग जानकी माँ के पास आई। यहां राम-लक्ष्मण गुरुदेव के पास पुष्प लेकर आए।

काम को राम नचाते हैं, शिव जलाते हैं, नारदजी जीतते हैं; इसमें हमारा आदर्श कौन हो सकता है? हम नचा पाएंगे तो राम आदर्श; जीत पाए तो नारद आदर्श; जला पाए तो शिव आदर्श। मेरा मानना है कि हम जलाए ना, जीते ना, नचाए ना; एक डिस्टन्स बनाकर हम रस लें। कोई नृत्य करता है, हम केवल एक पवित्र डिस्टन्स बनाकर उसका रस लें। जिसका मन प्रौढ़ हो वो काम को जला सकता है; जिसका मन विमल हो वो काम को जीत सकता है; जिसका मन रामवृत्तिओं से भरपूर है वो काम को नचा सकता है। लेकिन तीनों जगह एक खतरा है कि ये काम जब तक मन में रहे तब तक अच्छा है, जब बुद्धि में जाता है तब रस की सृष्टि नहीं कर सकता, जीवन को जड़ बना देता है।

मानस-कामदर्शन-९

काम श्रुतिसेतु तोड़ता है, राम श्रुतिसेतु अक्षुण्ण रखते हैं

'मानस-कामदर्शन' जो चल रहा है; अब काम की बात जब आती है, 'काम' शब्द जब हम यूज़ करते हैं, तब करीब हमारी दृष्टि में सिर्फ़ एक ही अर्थ उभरता है। मेरी समझ में ये ठीक नहीं है। काम मानी परस्पर विजातीय जीवों का एक-दूसरों के प्रति आकर्षण, प्राकृतिक आकर्षण और उसके बाद रची जाती भोगसृष्टि; काम का इतना ही अर्थ नहीं है। यद्यपि सृष्टि के सर्जन में यही कामक्रीड़ा ने काम किया है कि पूरा जगत इससे निर्मित हुआ। लेकिन मैंने बीच में एक बार निवेदन किया कि भगवान जितने व्यापक है, इतना ही काम व्यापक है। यद्यपि परमात्मा की व्यापकता की सीमा नहीं है; काम व्यापक बहुत है फिर भी सीमा है। 'रामचरित मानस' में जहां कामदर्शन है, वहां छः ऋतु का वर्णन है; ये छः ऋतु में प्रत्येक ऋतु एक ही चीज़ पर असर नहीं कर रही है। ये पूरा प्रसंग आप को पूरी गंभीरता से पढ़ना पड़ेगा। कल उसकी बात छोड़ दी थी, उसका जरा स्पर्श कर लें। थोड़ा गहन है लेकिन आप स्वस्थ चित्त से सुने। नारदजी से भगवान राम कहते हैं-

सुनु मुनि कह पुरान श्रुति संता ।
मोह बिपिन कहुँ नारि बसंता ।।

और ध्यान में इतना रखे कि यहां 'नारी' मानी केवल मातृशरीर को ही मत समझे, प्लीज़। मायारूपी नारी; जैसे कोई रंगमंच पर नारी का पोशाक पहन ले। तो, वहां गोस्वामीजी कहते हैं, रामजी ने कहा, हे नारद, पुराणकार, श्रुति और संत लोग कहते हैं कि मोहरूपी जंगल में मायारूपी नारी वसंतऋतु का काम करती है। मोह को ज्यादा संवारती है, आकर्षित करती है। एक ऋतु बनकर मायारूपी नारी आदमी के मोहरूपी जंगल को ओर रोचक बनाती है; ऐसे सभी ऋतुओं का क्रमशः वर्णन है।

जप तप नेम जलाश्रय झारी ।
होइ ग्रीषम सोषइ सब नारी ।।

जप, तप और नेम, तुलसीदासजी ने उसको जलाशय कहा है। लेकिन बहुत बड़ा जलाशय हो, प्रख़र ग्रीष्मऋतु आती है, धूप के महिने आते हैं, तो जलाशय सुख़ने लगता है। तो, जप, तप, नियम के जलाशय को मायारूपी नारी शोष लेती है; इसमें से रस सुख़ा देती है। मायाग्रस्त साधक जप करेगा लेकिन रस सुख़ जाएगा; माया जप को यंत्रवत् कर देती है। क्या ये हमारा अनुभव नहीं है? माया जब प्रभावित करती है तब बड़ों-बड़ों की तपस्या हिलती है। देखो, ये

बोलना भी एक माया है। आप तप करते हो ना और बोलनेवाला बड़ा प्रभावक, तर्कवादी हो, दृष्टांतकुशल हो, तो ये तप को अपनी मायावी बोली से इस तरह पेश करेगा कि आप को धीरे-धीरे लगेगा कि तप छोड़ो! फिर नियम; माया नियम के जलाशय को सुख़ा देती है; तप के जलाशय को प्रसन्नतामुक्त कर देती है। चलना तप है लेकिन किसी पीड़ित को मदद करने के लिए मैं जल्दी पहुंचूं, ये रसमय तप है। लेकिन कोई बीच में आ जाए कि ये तो पूरी दुनिया ऐसे ही चलती है; ऐसे तर्क हमारी तपस्या के जलाशय को सुख़ा देती है। उसीमें मायारूपी नारी से बचे। और पुरुष को हमारे यहां कहा गया है मायावी पुरुष। और जब माया पुरुष को लगती है तो मैं कहूंगा कि मायारूपी पुरुष भी नारी है। उसने माया के कपड़ें पहने है। केवल माताओं को न लागू किया जाय। तो, मायारूपी नारी मोहरूपी जंगल को वसंत में परिवर्तित कर देती है, ग्रीष्मऋतु बनकर हमारे जप-तप को रसहीन कर देती है। आगे-

काम क्रोध मद मत्सर भेका ।
इन्हहि हरषप्रद बरषा एका ।।

अब, वर्षाऋतु का वर्णन करते हैं। काम, क्रोध, मद और मत्सर ये मेढ़क है। वर्षा आती है तो ये चार मेढ़क बनकर दबे हुए जमीन से निकलते हैं। और उसको ये वर्षा पुष्ट करती है। आठ महिनें, कहते हैं, ये मेढ़क दबे हुए रहते हैं, सूक्ष्म से सूक्ष्म चेतना रहती है; वर्षा का संगम हुआ तो वो चेतना फूट पड़ती है। ध्यान देना, आदमी कितनी ही निष्कामता की बातें करे लेकिन कहीं न कहीं सूक्ष्म से सूक्ष्म अंदर दब जाती है चेतना, मोहरूपी-मायारूपी वर्षा का मौका आते ही वो दादुर की तरह प्रगट हो जाते हैं। गोस्वामीजी कहते हैं, वहां मायारूपी नारी अथवा नारीरूपी माया वर्षाऋतु बनकर कामादि को हर्ष प्रदान कती है। काम और क्रोध को तो हम सब जानते हैं। मद हम सब में है। मत्सर मानी दाह, जलन, द्वेष, ईर्ष्या। आप के दिल में किसी के प्रति ईर्ष्या दबी हुई है और कोई वर्षाऋतु बनकर आए और कोई दूसरे की प्रशंसा करने लगे, उसी समय ये मत्सररूपी दबा हुआ मेढ़क बाहर आने में देर नहीं करता। अब एक ऋतु ओर-

दुर्बासना कुमुद समुदाई ।
तिन्ह कहँ सरद सदा सुखदाई ।।

अब शरदऋतु की चर्चा करते हैं। दुर्वासनारूपी कुमुद; जिसमें दुर्वासना है, ख़राब वासना है उसको मायारूपी नारी पालती है, शरद बनकर उसको सुखद बनाती है। केवल स्त्री नहीं, धन-प्रतिष्ठा अन्य कोई भी कामना की हमारे मन में दुर्वासना पैदा हो जाए तो मायारूपी नारी अथवा नारीरूपी माया शरद बनकर सुख देने लगती है। आगे-

धर्म सकल सरसीरुह बृंदा ।
होइ हिम तिन्हहि दहइ सुख मंदा ।।

समस्त धर्मरूपी कमल को ये हिम बनकर धीरे-धीरे खतम कर देती है। मायारूपी नारी जब हावी होती है, तो आदमी का धर्मकमल मुरझाने लगता है। धर्म मानी सत्य, प्रेम, करुणा। आगे-

पुनि ममता जवास बहुताई ।
पलुहसइ नारि सिसिर रितु पाई ।।

मायारूपी नारी शिशिर ऋतु बनकर ममतारूपी जवास की बहुत रक्षा करती है; ममता को पुष्ट करती है। आगे-

पाप उलूक निकर सुखकारी ।
नारि निबिड़ रजनी अँधिआरी ।।

पापरूपी घुवडों को नारी एक अंधियारी ऋतु बनकर सुख

देती है; उसको सूरज जैसा भान ही नहीं होने देती। आगे-

बुधि बल सील सत्य सब मीना ।
बनसी सम त्रिय कहहिं प्रबीना ।।

बुद्धि, बल, शील और सत्य-उसको मछली कहा। चार प्रकार की मछलियों को पकड़ने का काम मायारूपी नारी बंसी की तरह करती है। माया बुद्धि को हर लेती है; बल मछली है, मायारूपी माया उसे फंसा देती है। और शील; चारित्र्य को मायारूपी नारी भ्रष्ट कर देती है। नवरात्रि में ध्यान रख़े, शील शृंगार बने, शील शिकार न बन जाए, उसका युवान-युवती ध्यान रखे। और सत्य भी मछली है। उस मछली को मायारूपी नारी फंसा देती है।

तो, प्रत्येक ऋतु में बिलग-बिलग रूपक देकर मायारूपी नारी हमारे शुभ मूल्यों को किस रूप में मिटा देती है उसका दर्शन गोस्वामीजी दे रहे हैं। मायारूपी स्त्री अवगुन का मूल है, जैसे शूर्पणखा। शूल देनेवाली ये मायारूपी स्त्री समस्त दु:ख की खानी है। हे नारद, मैंने इन सब का विचार कर आप को इस मायारूपी नारी के प्रभाव से बचाना चाहा; वर्ना ब्याह तो मैंने भी किया है, आप को क्यों रोकता?

मेरे भाई-बहन, बात ईतनी ही है कि काम मानी कुछ एक फोर्म नहीं; एक विजातीय भोगमात्र नहीं; काम का क्षेत्र विशाल है। राम असीम है, काम भी बहुत बड़ा है। लेकिन फिर भी उसकी सीमा है। मैं फिर आप के सामने रखूं, राम का वर्ण श्याम है, काम का वर्ण श्याम है; राम बहुत सुंदर है, काम भी इतना ही सुंदर है; जब भी राम की सुंदरता का वर्णन करना हुआ तब उसको काम का ही दृष्टांत ड़ालना पड़ा-

कंदर्प अगणित अमित छबि, नवनीत-नीरद सुंदरं,
पट पीत मानहु तडित रुचि शुचि नौमि जनक सुतावरं।

लेकिन मेरे श्रोता भाई-बहन, एक दोनों का भेद जरा गंभीरता से समझिए। कामदेव कोपित होता है तो श्रुतिसेतु को तोड़ देता है; श्रुतिमर्यादा, वेदमर्यादा को तोड़ देता है। और राम श्रुति की मर्यादा तोड़ते नहीं, उसका पालन करते हैं; जैसे बेटे ने खेल-खेल में एक खिलौना तोड़ दिया तो फिर बाप वो खिलौना देखता है तो उसको फिर रिपेर करता है, जोड़ देता है। तो, दोनों परस्पर विरोधी सूत्र 'मानस' में आया है। कामदेव कुपित हुआ तो तुलसी ने लिखा, एक क्षण में तमाम वैदिक मर्यादा टूट गई! कहीं सेतु नहीं बचा। ये काम का काम! है बाप-बेटा लेकिन बाप का काम-

श्रुति सेतु पालक राम तुम्ह जगदीस माया जानकी ।
जो सृजति जगु पालति हरति रुख पाइ कृपानिधान की ।।

तो, काम श्रुतिसेतु तोड़ता है, राम श्रुतिसेतु अक्षुण्ण रख़ते हैं। बच्चा अपनी माँ को छोड़े ही ना वो भी ठीक नहीं; उसको थोड़ा साहस जरूरी है। काम जो है वो रति के साथ जुड़ा रहे तो रति तो परमात्मा की प्रीति की सीड़ी का एक सोपान है। रति तो अति आवश्यक है। परमात्मा के पद में रति क्षण-क्षण बढ़नेवाला प्रेमतत्त्व है, वो कामदेव की पत्नी है; यदि काम को रतिग्रस्त बनाया जाए तो धीरे-धीरे काम भी भक्ति की यात्रा बन सकता है। उसको गालियां देने से कुछ बननेवाला नहीं, धक्का देने से कुछ बननेवाला नहीं है। कोई सत्संग का साबुन मिल जाए।

तो मेरे भाई-बहन, सत्संग का साबुन, भगवद्कथा में आता हरिनाम ये कम श्रम में ज्यादा मात्रा में हमारे कलेजे को साफ़ करेगा। साहब, चार-चार पांच-पांच साल के बच्चों में जब नियंत्रण नहीं रहा है तब ये टी.वी. कल्चर ने क्या-क्या सीखा दिया है! सहशिक्षण की मना नहीं करनी चाहिए लेकिन गंभीरता से ये भी

सोचना चाहिए कि सहशिक्षण, ध्यान न रहा तो बहुत नुकसान भी कर सकता है। सत्संग में भी आप केवल भजन को ध्यान में, लक्ष्य में रख़कर आओगे तो ही बहुत फायदा होगा। सत्संग में भी आप का ईरादा बिलग होगा तो समझना कि जिसका परिणाम अद्‌भुत मिलनेवाला है वहां परिणाम में कुछ कटौती हो सकती है। सब के पीछे कहीं न कहीं बीजक के रूप में कामना काम करती है। इसलिए मैंने बहुत सोचसमझकर कहा है, ये सभी ललित कलाएं अंदर से तो काम का बीज लिए हुए है। भजन बचाइएगा। इसलिए तुलसी का एक स्पष्ट सूत्र फिर दोहराऊं-

राम भजन बिनु मिटहिं कि कामा ।
थल बिहीन तरु कबहुँ कि जामा ।।

भगवान के भजन बिना कामना की मात्रा घटेगी नहीं। काम रस है। कुछ स्वयं नियंत्रण हो तो ये दुनिया एन्जोय करने जैसी है। नचाने की जरूरत नहीं, जलाने की जरूरत नहीं, जीतने की जरूरत नहीं, हम उसे समझें और बुज़र्गों ने उसके प्रयोगो से जो सारभूत तत्त्व दिए, हम उसे विवेक से देखें, एन्जोय करे, तो शंकराचार्य ने कहा, 'पूजातेविषयोपभोग', तेरा विषयोपभोग भी पूजा बन जाएगा।

तो, हरिनाम न भूले तो जगत के भोग भी योग बन जाएगा, धीरे-धीरे। जिस भगवान राम के परमपावन चरित्र का हम गायन कर रहे हैं उन राम के जीवन में कितनी बार काम का दर्शन तुलसीदासजी ने कराया है, जरा गिन तो लो; और दुनिया कहती है कि जहां राम वहां काम नहीं! ये तो दृष्टांत में कहा जाता है कि जहां उजाला वहां अंधेरा नहीं लेकिन वैज्ञानिक सत्य तो ये है कि उजाला और अंधेरा सापेक्ष है। आप ने उजाला देखा हो तो ही आप अंधेरे का

अनुभव कर सकते हैं। जो जन्मजात अंध है उसको अंधेरा क्या है वो ख़बर नहीं।

तो मेरे भाई-बहन, ये एक मात्र उपाय। भगवान राम ब्रह्म है लेकिन मानवरूप में आकर कामदर्शन हमें बहुत फायदा कराये इसी रूप में 'मानस' में आया है। राम जनम लेते हैं, तो वहां 'काम' शब्द है, 'पुत्रकाम सुभजग्य', वहां काम शुरू हो गया। भगवान राम बड़े हुए, विश्वामित्रजी के साथ गए, मिथिला की स्त्रीओं ने रंगभूमि में अनेक रूप में राम को देखा; तुलसी ने लिख दिया, नारीओं ने राम को 'अपनी रुचि अनुरूप' देख़ा। वो ही राम पुष्पवाटिका में जाते हैं तो कामदेव घोड़ा बनकर आया! पलपल राम के साथ काम जुड़ा है। ये सापेक्ष है; उसको बिलग नहीं कर सकते। महादेव के जीवन में पूरा काम का प्रकरण; मुनि के जीवन में पूरा काम का प्रकरण। ये सब प्रकरण राम के माध्यम से हमें काम के साथ कैसे जीना वो सिखाते हैं। मदद करेगा एक ही तत्त्व-हरिनाम।

तो, मेरे भाई-बहन, 'मानस' के आधार पर इन दिनों में कुछ कामदर्शन चल रहा था। अब कथा तो बड़ी लंबी पड़ी है बाकी, लेकिन मैं संक्षेप में आप को सुना दूं। पुष्पवाटिका में भगवान राम और जानकी मिलें। उसके बाद दूसरे दिन धनुषयज्ञ का दिवस। सभी राजा-महाराजा जनककपुर आ गए हैं। विश्वामित्र के संग राम-लखन आते हैं। एक के बाद एक राजा धनुष तोड़ने का विफल प्रयास करने लगे। जनकजी ने थोड़े रोष में आकर सभी राजाओं का अपमान कर दिया! भगवान राम की पीठ पर हाथ सहलाते हुए विश्वामित्र ने कहा, राघव, अब आप उठो। ये सब राजा में ताकत तो बहुत थी लेकिन कोई धनुष नहीं तोड़ पाया क्योंकि सब गुरु बिना थे; धनुष तो वो तोड़ सकता है जिसके पास गुरु होता है क्योंकि अहंकार टूटता है कोई सद्‌गुरु की करुणा से। गोस्वामीजी कहते हैं, क्षण के मध्यभाग में रामजी ने धनुष तोड़ा! जयजयकार हुआ। जानकीजी को लेकर सखियां आई; जयमाला पहनाई राम को। इतने में परशुरामजी आए। आख़िर में परशुरामजी भगवान की स्तुति करके अवकाश प्राप्त करते हैं।

बारात लेकर दशरथजी पधारे और राम-सीता के लग्न की तिथि निश्चित हुई; मागशर शुक्ल पंचमी, गोरज बेला; भगवान राम के दुल्हे की सवारी निकली है। साक्षात् कामदेव के घोड़े पर रामजी बिराजमान। अन्य तीनों भाईओं का ब्याह भी जनक की अन्य बेटिओं के साथ निश्चित हुआ। मांडवी भरतजी को, ऊर्मिला लक्ष्मणजी को और श्रुतकीर्ति शत्रुघ्न महाराज को अर्पण। कुछ दिन बीते। महामुनि विश्वामित्र महाराज दशरथजी से विदा मांगते हैं। किसी गृहस्थ के वहां गृहस्थ का कार्य हो, उसका उत्साहवर्धन हो, तो साधु को जाना चाहिए लेकिन कार्य पूरा होने के बाद उदासीन, असंग साधु को ज्यादा ठहरना नहीं चाहिए। फिर अपनी भजन की कमाई करने के लिए अपने तपोवन में चले जाना चाहिए। विश्वामित्र महाराज की बिदा वेला पूरा राजपरिवार चूप हो गया! दशरथजी ने चरण पकड़े और बहुत महत्त्व की पंक्ति उच्चारित हुई-

नाथ सकल संपदा तुम्हारी ।
मैं सेवकु समेत सुत नारी ।।

'हे महाराज, ये सब संपदा आप की है। मैं मेरे परिवार के साथ आप का सेवक हूं। आपको भजन से अवकाश मिले तो अयोध्या में आकर हमें दर्शन देते रहना।' मेरे भाई-बहन, किसी साधु की कृपा से अपने जीवन के कार्य सम्पन्न होते हैं, फिर उसको रोकना नहीं। और मांगना है तो इतना ही मांगना, हे प्रभु! आप को हमारी याद आए

तो सामने से आकर हमें दर्शन देते रहिएगा कि हमारे पाप का नाश हो। एक वस्तु पक्की है, मुझे बहुत भरोसा है कि साधु के दर्शन से पाप का नाश होता है। स्मृतिओं को गुनगुनाते विश्वामित्रजी अपनी तपस्थलि में पहूंच जाते हैं। 'बालकांड' का समापन होता है।

'अयोध्याकांड' के आरंभ में महाराजा दशरथजी दर्पण में देखते हैं। सफेद बाल ने उसको प्रेरणा दी कि राज्य राम को दे देना चाहिए। निर्णय लिया लेकिन मंथरा ने कैकेयी माँ की बुद्धि बदल दी! राम को राज के बदले चौदह साल का वनवास आया! हाहाकार हो गया अवध में! जानकी और लक्ष्मणजी साथ आए हैं। तीनों वनपथ पर निकले हैं। सुमंत रथ लेकर तमसा तट पर आए। पूरी अयोध्या पीछे निकल पड़ी। तमसा के तट पर प्रभु का एक रात्रि का मुकाम। दूसरे दिन प्रभु अंधेरे में सुमंत से कहकर लोग पीछे न आए इसलिए रथ लेकर निकल गए।

प्रभु का रथ शृंगबेर पहुंचा। गुह्य ने सेवा की। भगवान को केवट ने गंगापार करवाया। वहां एक रात रहकर दूसरे दिन पदयात्रा करते भरद्वाजजी के आश्रम में; वहां रहकर आगे वाल्मीकि के आश्रम में। स्थाननिर्देश हुआ और परमात्मा चित्रकूट निवास करने लगे। यहां दशरथजी का प्राणत्याग; पितृक्रिया हुई। राज्य का निर्णय नहीं हुआ। भरतजी ने कहा कि ''मैं पद का नहीं, पादुका का आदमी हूं। मैं सत्ता का नहीं, मैं सत् का आदमी हूं, हम सब एक बार राम के पास जाए और फिर मेरा ठाकुर जो कहेगा सो मैं करूंगा।'' पूरी अयोध्या चित्रकूट गई। बहुत सभाएं हुई। आख़िर में संत समर्पण करता है। भरतजी भगवान से कहते हैं, प्रभु! आप का मन जिसमें प्रसन्न हो, बस ऐसा करो। करुणानिधान ठाकुर रामभद्र भरतजी को पादुका देते हैं-

प्रभु करि कृपा पांवरी दीन्हीं।
सादर भरत सीस धरि लीन्हीं।।

भरत अयोध्या लौटे। सिंहासन पर पादुका का स्थापन किया। फिर एक दिन भरतजी वसिष्ठजी से कहते हैं कि 'आप मुझे आज्ञा दे तो मैं नंदिग्राम रहूं। मेरा ठाकुर वन में रहे तो मैं भवन में नहीं रह सकता।' वसिष्ठजी ने कहा, 'आप जो कहते हैं वो ठीक है लेकिन कौशल्याजी का दिल दु:खित हुआ तो आप की रामभक्ति सफल नहीं होगी।' सब कौशल्या के पास आये। कौशल्या की आंखों से झारझार आंसु गिरने लगे! फिर भी रामजननी है, अपने को संभाल लिया। सोचा कि संत को उसकी ईच्छा से अनुकूल नहीं रहने दूं तो शायद वो जी नहीं पाएगा। हिंमत धारण की, अनुमति दी। भरतजी नंदिग्राम जाते हैं। गोस्वामीजी वहीं 'अयोध्याकांड' पूरा कर देते हैं।

'अरण्यकांड' में भगवान राम, लखन, जानकी स्थलांतर करते हैं। अत्रिआश्रम गए; कुंभजआश्रम गए। प्रभु गीधराज जटायु से मैत्री करते गोदावरी के तट पंचवटी में रहे। शूर्पणखा दंडित हुई। खरदूषण को सेनासमेत परमात्मा ने निर्वाण दिया। यहां सीता अग्नि में समा गई। छायाबिंब को रावण अपहरण करके ले जाता है। जटायु ने शहादत दी। प्रभु मानवलीला करते हुए रोते हुए जानकी को खोजते आगे बढ़े। शबरी के आश्रम आए। वहीं से पंपासरोवर गए। नारद आए। वहां 'अरण्य' पूरा हुआ।

'किष्किन्धा' के आरंभ में हनुमान और राम की भेंट होती है। सुग्रीव और वालि के युद्ध में वालि प्राणभंग होता है और सुग्रीव को किष्किन्धा का राज्य मिलता है। प्रभु चातुर्मास करते हैं। जानकी की खोज का अभियान चला। दक्षिण में जानेवाली टुकड़ी में आख़िर में हनुमानजी ने प्रणाम किया। भगवान ने मुद्रिका

हनुमानजी को दी। यात्रा आगे बढ़ती है। स्वयंप्रभा और संपाति का मार्गदर्शन मिला। 'किष्किन्धाकांड' पूरा हुआ। 'सुन्दरकांड' के आरंभ में हनुमानजी लंका जाने के लिए तैयार हुए-

जामवंत के बचन सुहाए।
सुनि हनुमंत हृदय अति भाए।।

हनुमानजी लंकाप्रवेश करते हैं। कहीं जानकी दिखाई नहीं दी। विभीषण ने युक्तिबताई। अशोकवाटिका में हनुमानजी पहुंचे। हनुमानजी और माँ की भेंट हुई। हनुमानजी ने फल-फूल खाए। अक्षय का क्षय। इन्द्रजित हनुमानजी को बांधकर रावण के दरबार में लाता है। मृत्युदंड की बात आई। विभीषण ने दूसरे दंड का प्रस्ताव रखा। पूंछ जलाई। पूरी लंका जलाकर हनुमान माँ से चूडामणि लेकर लौट आए। प्रभु ने कहा, अब विलंब न करे। प्रस्थान हुआ। समुद्र के तट पर परमात्मा का पूरा समाज आया। समुद्र ने ध्यान नहीं दिया। विभीषण की शरणागति हुई। समुद्र आता है; भगवान को सेतुबंध का प्रस्ताव देता है; और 'सुन्दरकांड' का समापन।

'लंकाकांड' में सेतु बना। भगवान रामेश्वर की स्थापना। सुबेल पर प्रभु ने डेरा डाला। दूसरे दिन संधि का प्रस्ताव लेकर दूत के रूप में अंगद गया। संधि विफल; युद्ध अनिवार्य; घमासान युद्ध! एक के बाद एक वीर पुरुषों का निर्वाण। आख़िर में इकत्तीसवें बान से प्रभु ने रावण को निर्वाण दिया। रावण का तेज प्रभु के चेहरे में समा गया। रावण की क्रिया हुई। विभीषण को लंका का राज मिला। जानकीजी को अग्नि से बाहर निकालकर प्रभु के पास लाया गया। फिर भगवान पुष्पकारूढ़ होकर अयोध्या की ओर आगे बढ़े। शृंगबेरपुर उतरा विमान। केवटों को बुलाया। यहां हनुमानजी पहुंच जाते हैं अयोध्या भरत को खबर देने के लिए। 'लंकाकांड' पूरा।

'उत्तरकांड' में भरत और हनुमान की भेंट। प्रभु पधार रहे हैं। प्रभु का विमान अयोध्या आया। पूरी अयोध्या दौड़ी। परमात्मा ने अपना ऐश्वर्य प्रगट किया; अमित रूप धारण करके प्रत्येक व्यक्ति को उसकी इच्छा के अनुकूल भगवान मिले हैं। भगवान ने कैकेयीमाँ का संकोच सब से पहले तोड़ा। अन्य माताओं को प्रणाम किया। वसिष्ठजी ने दिव्य सिंहासन मांगा। राम-जानकी सब को प्रणाम करके गादी पर बिराजित हुए। विश्व को रामराज्य देते हुए वसिष्ठजी ने तिलक किया-

प्रथम तिलक बसिष्ट मुनि कीन्हा।
पुनि सब बिप्रन्ह आयसु दीन्हा।।

त्रिभुवन में रामराज्य का जयजयकार हुआ है। हनुमानजी के सिवा बाकी सभी मित्रों को भगवान ने अपने फ़र्जो में लौटा दिए। समय बीता। राम की ये ललित नरलीला है; जानकी ने दो पुत्रों को जनम दिया। तीनों भाईओं के घर भी दो-दो पुत्रों का जनम हुआ। अयोध्या के वारिस का नाम दिखाया और तुलसीजी ने 'मानस' में रामकथा वहां रोक दी। जानकीजी का दूसरी बार का त्याग आदि विवाद, दुर्वादवाली कथा नहीं लिखी। उसके बाद कागभुशुंडि और गरूड की कथा है। गरुडजी कथा सुनते हैं और आख़िर में सप्तप्रश्न पूछते हैं; कागभुशुंडि उसका जवाब देते हैं और भुशुंडिजी गरुड के सामने रामकथा को विराम देते हैं। यहां याज्ञवल्क्य महाराज ने कथा को विराम दिया कि नहीं ये प्रश्नार्थ है। यहां भगवान शिव ने कथा को विराम दिया। मेरे कलिपावनावतार पूज्यपाद गोस्वामीजी दीनता के घाट पर बैठे अपने मन को और संतवृंद को कथा सुनाते हुए कथा को विराम देते हैं। गोस्वामीजी कहते हैं, जिसकी लवलेश कृपा से मेरे जैसा अतिमतिमंद आज परम विश्राम का अनुभव कर रहा है, मैं राम के समान किसको कहूं?

मो सम दीन न दीन हित तुम्ह समान रघुबीर ।
अस बिचारि रघुबंस मनि हरहु विषम भव भीर ।।
कामिहि नारि पिआरि जिमि लोभिहि प्रिय जिमि दाम ।
तिमि रघुनाथ निरंतर प्रिय लागहु मोहि राम ।।

अपने शास्त्र के समापन में गोस्वामीजी फिर एक बार काम का दर्शन देते हैं कि हे प्रभु! कामी को जैसे स्त्री प्रिय लगती है, लोभी को जैसे धन प्रिय लगता है; कामी को स्त्री तो प्रिय लगती है लेकिन निरंतर नहीं लगती; लेकिन गोस्वामीजी कहते हैं कि प्रभु, आप मुझे निरंतर प्रिय लगो।

बाप, चारों परमाचार्यों ने अपनी-अपनी पीठ से अपने-अपने श्रोताओं के सामने कथा को विराम दिया। इन चारों आचार्यों की आशीर्वादक छांव में बैठकर इस तीर्थभूमि खजुराहो में मेरी व्यासपीठ मुखर हुई नव दिन के लिए। और मैं भी इस कथा को विराम देने की अग्रसर हूं तब कुछ शब्द। हरेक प्रकार से ये पूरा प्रेमयज्ञ सम्पन्न हो रहा है तब मुझे बहुत बड़ी प्रसन्नता है। बाप! खुश रहो, खुश रहो, खुश रहो। मेरे सभी श्रोताओं से मैं इतना ही कहूं कि इन सूत्रात्मक रामकथा से, यदि इस कामदर्शन से हमारे जीवन में कोई प्रकाश हुआ हो; और कुछ याद न रखो तो कोई बात नहीं लेकिन मैंने बीच में बार-बार कहा कि दीपशिखा दो गुण रखती है- दाहकता और प्रकाश। पतंगा उसकी दाहकता में खत्म हो जाता है और समझदार प्रकाश लेकर एन्जोय कर लेता है। कामदेव तो दीपशिखा है; उसमें दाहकपना भी है, जो बिना समझे कूदे वो भस्म होंगे; लेकिन उसी कामऊर्जा को जो आत्मसात् करेगा वो रस लूटेगा; कामरस से रामरस तक की यात्रा सम्पन्न करेगा।

तो, 'मानस कामदर्शन' जो पेश किया गया; कल का या परसों का सूत्र याद रखिएगा, न काम को बश में लेना है, न काम के बश होना है, सत्संग के विवेक से जीवन में 'बस' करना है। धन्य है मेरे देश के ऋषि-मनीषीओं को जिसने पूरी दुनिया दुर्जन कहती है उस काम को 'देव' का दर्जा दिया। और ये नव दिवसीय प्रेमयज्ञ का फल, सुक्रित जहां बाहर कामदेव है और अंदर महादेव है ऐसे विश्वनाथ; कामदेव और महादेव दोनों को श्राद्ध के दिनों मे श्रद्धापूर्वक ये नवदिवसीय रामकथा 'मानस-कामदर्शन' अर्पण कर देता हूं।

सत्संग का साबुन, भगवद्कथा में आता हरिनाम ये कम श्रम में ज्यादा मात्रा में हमारे कलेजे को साफ़ करेगा। सत्संग में भी आप केवल भजन को ध्यान में, लक्ष्य में रख़कर आओगे तो ही बहुत फायदा होगा। सत्संग में भी आप का ईरादा बिलग होगा तो समझना कि जिसका परिणाम अद्भुत मिलनेवाला है वहां परिणाम में कुछ कटौती हो सकती है। सब के पीछे कहीं न कहीं बीजक के रूप में कामना काम करती है। इसलिए मैंने बहुत सोचसमझकर कहा है, ये सभी ललित कलाएं अंदर से तो काम का बीज लिए हुए है। भजन बचाइएगा। भगवान के भजन बिना कामना की मात्रा घटेगी नहीं।

मानस-मुशायरा

सलीका हो अगर भीगी आंखों को पढ़ने का 'फ़राज़,'
तो बहते हुए आंसू भी अक्सर बातें करते हैं ।

•

ये वफ़ा तो उन दिनों हुआ करती थी 'फ़राज़,'
जब मकान कच्चे और लोग सच्चे हुआ करते थे।

– अहमद फ़राज़

पानी इतना नहीं कि दरिया कहे उसे।
इतना भी कम नहीं कि कतरा कहे उसे।

– दीक्षित दनकौरी

शबभर रहा खयाल में तकिया फ़कीर का ।
दिनभर सुनाऊंगा तुम्हें किस्सा फ़कीर का ।

– विजेन्द्र परवाज़

हजार आफतों से बचे रहते हैं वो,
जो सुनते जियादा हैं, कम बोलते हैं।

– शरफ़ नानपारवी

अपना चेहरा देख न पाए,
औरों को शीशा दिखलाए ।
इस दुनिया में कौन बुज़ाए,
जब पानी ही आग लगाए !

– जमिल हापुडी

क्वचिदन्यतोऽपि

शैक्षणिक संस्थान विद्यार्थी को मौसम और मौका दे

जे.पी.पारेख हाईस्कूल के कार्यक्रम में मोरारिबापू का प्रासंगिक वक्तव्य

आज के शिक्षण के लिए एक बहुत ही प्रेरणादायी और मार्गदर्शक कार्यक्रम के अवसर पर पधारे समस्त आदरणीय गुरुजन, आचार्यश्री, शिक्षकगण तथा भाईयों और बहनों।

तो बाप, 'बुलेटिन बोर्ड' की शुरूआत करने के लिए कई दिनों से आचार्य साहब कहते थे। व्यस्तता के कारण कहूं कि बाद में मिलेंगे पर जे.पी.पारेख हाईस्कूल के आचार्य और स्टाफ के धैर्य को मेरा प्रणाम। आज मैं अपनी ही स्कूल में आया हूं इसका मुझे आनंद है। इस स्कूल में अभ्यास करने के फायदे मैंने देखे थे। महेतासाहब, कुलपति जैसा एक आदमी; राजनीति के दावपेच जरा भी नहीं; भारत का राष्ट्रपति बन सके ऐसा आदमी; अजातशत्रु। मैंने देखा है कि अपने घर से स्कूल तक आते-आते महुवा के समस्त बाजार से गुजरते कई सलामें लेनी पड़ती थी; उनका एक हाथ हंमेशा उठा हुआ ही रहता था। ऐसे एक ऋषि जैसे आदमी से पढ़ाई करने का अवसर मिला। इनके बाद सभी शिक्षक आज भी वे मूल्यों के बारे में सोचते हैं। ये सभी फायदे हैं। पर एक नुक्सान भी है। इस स्कूल में जो पढ़े वो मेट्रिक में तीन बार फेइल होता है! पर आप फेइल नहीं हो सकते; आपको पास होना आता है।

बच्चों, मैंने आप सबको नजदीक आने को कहा, क्योंकि हम यहां पढ़ने आए तब स्कूल में जगह नहीं थी। हाऊसफूल! हम महेता साहब की केबिन में गए। पूछा कि यहां कहां बिठाए, जगह ही नहीं है। हम तीन-चार लडकों ने कहा, दूसरे चाहे बेन्च पर बैठे, हम नीचे बैठेंगे। हमें इसी हाईस्कूल में पढ़ना है। मैं इस हाईस्कूल से इस तरह जुड़ा हूं। यहां के कार्यक्रम में फ़र्ज़ के रूप में भी मुझे आना चाहिए। यह तो एक प्राथमिक बात हुई।

बुलेटिन के बारे में साहब का जो अनुभव है। अद्यतन टेकनोलोजी और उनका पहले के अनुभव पर से बहुत सरलता से सब कहा। मैं तो इसमें क्या कहूं? यह सब एक ओर रखकर मुझे स्कूल के शिक्षण के बारे में, विद्यार्थीयों को लेकर कुछ कहना है। थोड़े समय के लिए शिक्षक रहा हूं इसी नाते समाज मुझे एकाद-दो प्रतिशत औदार्य से अधिकार दे तो मुझे दो-चार बातें करनी है।

विद्यार्थी पांच प्रकार के होते हैं। उन्हें पांच वस्तु देनेवाले शिक्षक मिले ऐसे विद्यार्थीयों की मैं पांच पक्षियों के साथ तुलना करता हूं। मुझे तरोताज़ा रहना हो तो मुझे विद्यार्थी बने रहना चाहिए। शिक्षण कैसा है और कैसा होना चाहिए यह विश्लेषण करने की मेरी हेसियत भी नहीं है; मैं कुछ समझता भी नहीं।

पांच पक्षीयों में प्रथम, विद्यार्थी चातक है; विद्यार्थी चातक पक्षी है। दूसरा, विद्यार्थी कोयल जैसा होता है। विद्यार्थी माने कोयल। तीसरा, विद्यार्थी तोता जैसा होता है। चौथा, विद्यार्थी चकोर जैसा है। पांचवां, विद्यार्थी मयूर जैसा है। इन पांच पक्षीयों की एक विशिष्टता है साहब, अपनत्व है। ये वस्तु ट्युशन से नहीं मिलती। इन पक्षीयों ने किसी भी स्कूल में दाखिला नहीं लिया है। वे अस्तित्व के गर्भ से पांच वस्तु लेकर आते हैं। वेदकालीन विद्यापद्धति अनुसार मैं एक व्यासपीठ पर बैठनेवाले के रूप में पुन: मैं एक शब्द रखता हूं मेरी जिम्मेदारी से बोलता हूं कि ये पांच पक्षी अस्तित्व में से ये पांच वस्तु लेकर आते हैं। हम पक्षी तो नहीं है।

आज के देशकालानुसार ये पांच वस्तु अपनी स्कूल में रख सकते हैं। चातक पक्षी-विद्यार्थी पहली वस्तु अस्तित्व के गर्भ से लेकर आता है; उसका नाम प्यास है। वह प्यास उसमें पड़ी है। चातक में एक ही लक्षण है साहब, उसमें प्यास होनी चाहिए। वह प्यास उसमें पड़ी है। कई बार वक्त पर खाना न मिलने पर भूख मर जाती है। कई बार अधिक खिलाने के बाद वमन के प्रयोग किए गए हैं। प्यास की कद्र किसने की? मेरी दृष्टि से विद्यार्थीयों में पड़ी प्यास को पकड़ना यही शिक्षण है। वहां सूक्ष्म कला की जरूरत पड़ती है। स्कूलों ने आशा बहुत रखी पर पकड़ नहीं पाये। प्यास पकड़ने के लिए एक मूल्यनिष्ठ आदमी, समर्पित आदमी; विद्या के यज्ञ में समर्पित हो जाने की इच्छा हो ऐसा शिक्षक ही वह कर सके; दूसरा कोई प्यास को पकड़ न सके। चातकी विद्यार्थी की प्यास पकड़े वही शिक्षण है।

दूसरा, विद्यार्थी कोयल है। मौसम आने पर उसकी कुहुक को कोई नहीं रोक सकता। ऐसे ही एक समय आता है तब विद्यार्थीयों की कुहुक को कोई नहीं रोक सकता। ऐसा तो नहीं होता है न कि मौसम आने पर विद्यार्थी को कुहुकने न दे? उनकी कुहुक की हत्या हो

जाय ऐसा तो कहीं नहीं हो रहा है? उन्हें कुहुकने दीजिए। हमने सीटी बजानी सिखाई पर कुहुकना नहीं सिखाया! उनकी कुहुक तो देखिए साहब! विद्यार्थी मौका और मौसम साथ हो तब बिना कुहुक के नहीं रह सकता। उन्हें अवसर मिले, मौसम मिले बस! सौराष्ट्र का प्रसिद्ध दोहा है -

अमे गिरिवरजा मोरला कंकर पेट भरा,

(पण) रत आवे न बोलिये तो (अमारा) हैया फाट मरा!

मौका मौसम! इन शैक्षणिक संस्थाओं को क्या करना है? मौका और मौसम दोनों देने का है।

विद्यार्थी का तीसरा प्रकार तोता का है। प्रत्येक में शुकत्व है। केवल धार्मिक संदर्भ में नहीं। शुक कितना बड़ा पात्र! विद्यार्थी को न तो वर्ण है न तो धर्म! विद्यार्थी जैसा कोई अवधूत नहीं। अस्तित्व में से अवधूती लेकर आता है। हम गांव के रहनेवाले हैं। ग्रीष्म में तोता कच्ची-पक्की आम कुतरे। थोड़ा नीचे गिरे, सब न खाये। फिर चूहे, चिंटिंया खाने को आये। अपना विद्यार्थी शुक है, साहब! उसने कुरेदते-कुरेदते जो नीचे गिराया उनमें से कितने ही जो अनपढ़ है, सिर्फ अपने ही घर में बन्द रहे हैं और समाज की बिल्लियों से डरते फिरते हैं ऐसे कितने ही तत्त्वों को वे खुराक देंगे। विद्यार्थीयों का शुकत्व पकड़े वही शिक्षण है।

चौथा पक्षी चकोर है। चकोर को चाहे कितना ही दूर क्यों न हो, कुछ देखना है। चंद्र को देखना है। वह यह नहीं देखता कि यह द्वितीया का है या पूनम का। चकोर को निरीक्षण करना है। 'भागवत' के शब्दों में कहूं तो उसे 'प्रेमविक्षण' कहते हैं। गोपी ने कृष्ण को देखा नहीं है ऐसा नहीं, उसे बचपन से देखा है। पर गोपी जब प्रेमपौढ़ता में आती है तब एक शब्दप्रयोग करती है, 'प्रेमविक्षणम्'; अब हमें प्रेमविक्षण चाहिए। प्रेम निरीक्षण नहीं, प्रेमविक्षण। निरीक्षण का पद उसे देना ही चाहिए। प्रेमविक्षण माने चकोरत्व। उसे प्रकाश की भूख है। उसे शीतल प्रकाश चाहिए। उसे यह मिले इसका नाम शिक्षण है।

विद्यार्थी का पांचवां प्रकार मयूर है। तुलसीदासजी का एक दोहा है। मयूर खूबसूरत पक्षी है। पर उसके अंग के मोड़ जरा विचित्र है। उसकी मेघ को पुकार में थोड़ी कायरता है। वह कहता है, भाई, तुम आओ, हमारी यह दशा है! अतः तुलसी ने एक दोहा लिखा -

तनु बिचित्र कायर बचन अहि अहार मन घोर।

तुलसी हरि जाए पच्छधर ताते कह सब मोर।।

ऐसा है फिर भी लोग उसे 'मोर' क्यों कहते हैं? 'मोर' माने मेरा। पर भगवान ने जब से उसका पिच्छ सिर पर धारन किया तभी से सब कहते हैं 'मोर' यह तो मेरा है। विद्यार्थी को नाचना है वही उसका मोरत्व है। हमें लगे कि यह मेरा विद्यार्थी है। उसे कोई मेघ का ताल दे। शास्त्रीय संगीत में मेघ राग है। मोर से मेघ परिचय करा दे यही शिक्षण है। चातक की प्यास को तृप्त करे यही शिक्षण है। कोयल को मौसम और मौका दे यही शिक्षण है। शुक जो अवधूती है उसे अवसर दे यही शिक्षण है। ऊपर देखने की जिसे प्यास है उसे पकड़े यही शिक्षण है। इन पांच प्रकरों को हम परखें। हम ऐसे प्रयोग करे। अंत में एक शे'र कहता हूं -

लाख मयखानें बंद कर दे जमानेवाले,

शहर में कम नहीं है आंखों से पिलानेवाले।

(जे.पी.पारेख हाईस्कूल, महुवा (गुजरात) के कार्यक्रम में प्रस्तुत वक्तव्य : दिनांक ४-१०-१४)

|| जय सीयाराम ||